ISSN: 3049-2211

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

खंड-1, अंक-7 जुलाई- 2025

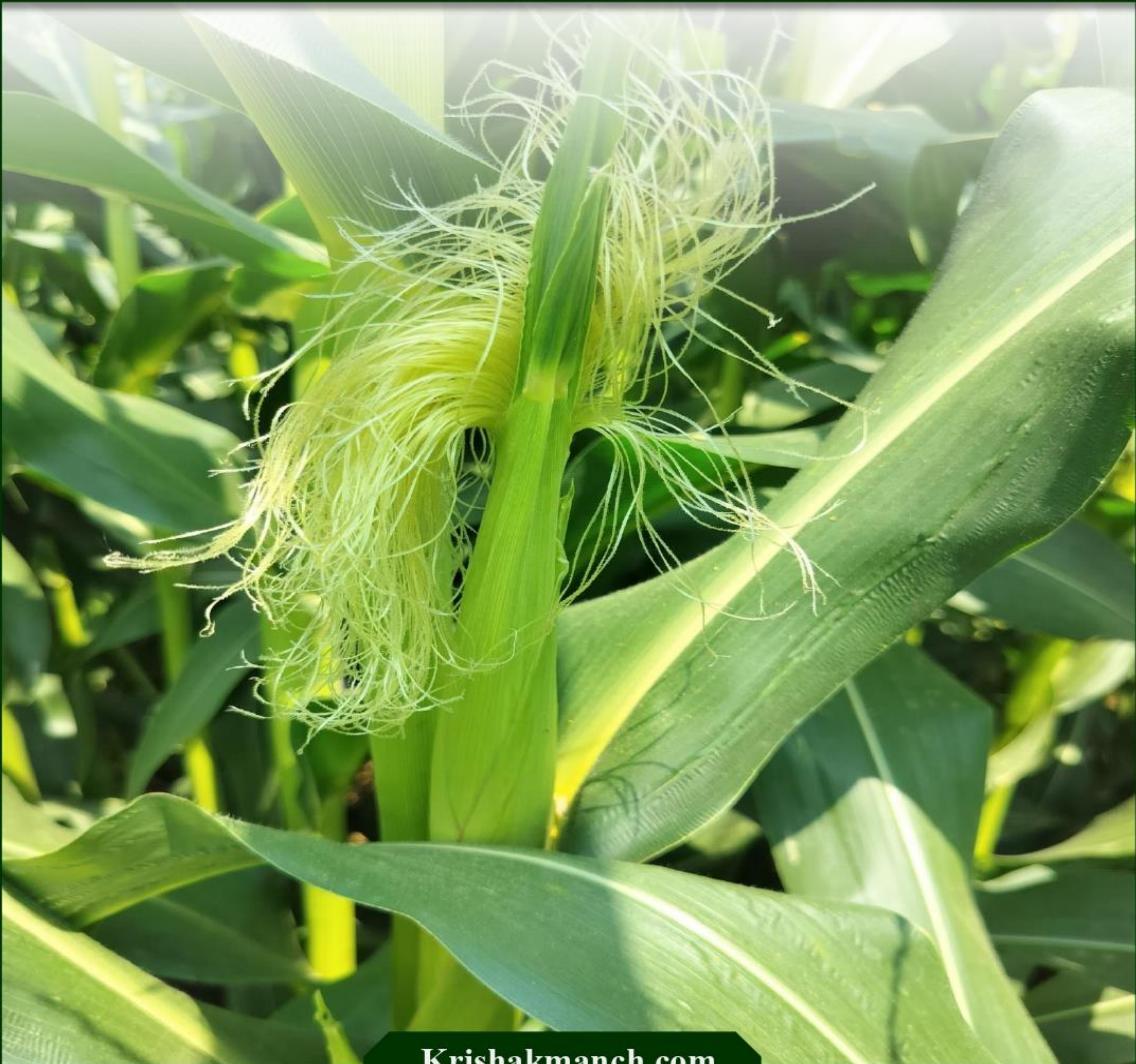

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

ISSN: 3049-2211

सम्पादक मंडल

डा. देवराज सिंह

मुख्य सम्पादक
सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
सब्जी विज्ञान विभाग
कृषि विज्ञान विभाग, इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

प्रिया पाण्डेय

सहायक मुख्य सम्पादक
शोधार्थी
ए.के.एस. विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)।

सहायक सम्पादक

डा. विक्रमा प्रसाद पाण्डेय
पूर्व अधिष्ठाता (उद्यान महाविद्यालय)
आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

डा. अरविन्द कुमार चौरसिया
सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग (मेघालय)।

डा. महेन्द्र कुमार यादव
सहायक प्राध्यापक (सब्जी विज्ञान)
आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)।

श्री कल्याण सिंह
स्वतंत्र लेखक/शोधार्थी
बांदा कृ. एवं प्रौ. वि.वि., बांदा (उ.प्र.)।

डा. रविशंकर पटेल
सहायक प्राध्यापक (कीट विज्ञान)
स.व.भा.प.कृ. एवं प्रौ. वि.वि., मेरठ (उ.प्र.)।

डा. रविकेश कुमार पाल
सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)
रामा विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)।

डा. सरिता
सहायक प्राध्यापक (पौध रोग विज्ञान)
आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)।

डा. सचि गुप्ता
सहायक प्राध्यापक (पुष्प विज्ञान)
आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

डा. विवेक पाण्डेय
सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)
इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

डा. देवेश तिवारी
सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)
पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, तूरा कैंपस (मेघालय)।

डा. कुमार अंशुमान
सहायक प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)
के.एन.आई.पी.एस.एस., सुल्तानपुर (उ.प्र.)।

डा. मंजीत कुमार
सहायक प्राध्यापक
लिंगायस विद्यापीठए फरीदाबाद, हरियाणा।

डा. वर्तिका सिंह
सहायक प्राध्यापक (फल विज्ञान)
आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)।

ISSN: 3049-2211

विषय वस्तु

क.सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
1	मशरूमः हिमालयी आजीविका और पारिस्थितिकी तंत्र के लिए उभरती आशा।	4
2	फसल रोगों के लिए मौसम का प्रभाव।	5
3	प्राकृतिक संसाधन में रिमोट सेंसिंग और जीआईएस।	6
4	धान में लगने वाले प्रमुख कीट, रोग एवं उनकी रोकथाम।	7–8
5	पौधों के रोगः कारण, लक्षण और समाधान।	9–10
6	सफेद लट का जीवन चक्र एवं उनका प्रबन्धन।	11
7	मोरिंगा की वैज्ञानिक खेती और औषधीय महत्व।	12–14
8	तना गलन और कंद गलन रोग का प्रबंधन।	15
9	केंचुआ खादः समृद्ध मृदा स्वास्थ्य का आधार।	16–17
10	प्राकृतिक मिठास की खेतीः स्टीविया का वैज्ञानिक दृष्टिकोण।	18–20
11	मशरूम की ताज़गी अब लंबे समय तकः संरक्षण की वैज्ञानिक और व्यावहारिक तकनीकें।	21–22
12	भारत में डिजिटल फार्मिंग की भूमिका और महत्व।	23–25
13	खरीफ फसलों के लिए केन्द्रीय और बिहार सरकार की नीतियां और सब्सिडी।	26–27
14	वायरस जनित रोगों से सब्जियों की सुरक्षा।	28
15	फार्म–टू–कंज़्यूमर मार्केटिंगः किसानों के लिए एक नई दिशा।	29
16	मत्स्य पालन/मत्स्य प्रबंधन में आधुनिक तकनीकी व समाधानः डिजिटल तकनीक अपनाएं, मत्स्य पालन को आसान बनाएं।	30
17	सब्जी उत्पादन में क्रांतिः नियंत्रित परिस्थितियों में गुणवत्ता सुधार के लिए नवीन प्रौद्योगिकियां।	31–32
18	सहजनः एक बहु उपयोगी पेड़।	33–34
19	सीवेज स्लजः पर्यावरण अनुकूल खेती की दिशा में कदम।	35–36
20	औषधिय गुणों से प्रचुर है बैंगनी फूलगोभी।	37–38

ISSN: 3049-2211

मशरूम: हिमालयी आजीविका और पारिस्थितिकी तंत्र के लिए उभरती आशा

श्वेता बिजला– वैज्ञानिक, भा.कृ.अनु.प.– खुम्ब अनुसंधान निदेशालय, सोलन।
वी.पी. शर्मा– वैज्ञानिक, भा.कृ.अनु.प.– खुम्ब अनुसंधान निदेशालय, सोलन।
बृज लाल अत्री– प्रधान वैज्ञानिक, खुम्ब अनुसंधान निदेशालय, सोलन।
अनुराधा श्रीवास्तव– वरिष्ठ वैज्ञानिक, खुम्ब अनुसंधान निदेशालय, सोलन।

मशरूम

अक्सर **"सफेद सब्जी"** कहे जाने वाले मशरूम पौधे नहीं बल्कि कवक (फफूंद) होते हैं, जिनमें कृषि अवशेष को पुनः उपयोग में लाने, वनों में सहजीविता स्थापित करने और उच्च पोषण प्रदान करने की अद्भुत क्षमता होती है। इनमें आवश्यक प्रोटीन, फाइबर, विटामिन और औषधीय गुण होते हैं, और इनकी खेती में बहुत कम भूमि और जल की आवश्यकता होती है। पहाड़ी और जलवायु प्रतिबंधित हिमालयी क्षेत्र के लिए मशरूम एक टिकाऊ और व्यावसायिक रूप से मुनाफेदार विकल्प के रूप में उभर रहे हैं।

वर्तमान में हिमालयी राज्य भारत के कुल मशरूम उत्पादन का लगभग 19% (करीब 60,000 टन) योगदान देते हैं। लेकिन इस क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाने की व्यापक संभावनाएं मौजूद हैं। उचित अवसंरचना और नीतिगत समर्थन मिलने पर यह क्षेत्र राष्ट्रीय मशरूम केंद्र बन सकता है, जिससे आजीविका में वृद्धि और नाजुक पारिस्थितिकी की रक्षा संभव है।

समृद्ध मशरूम विविधता

उत्तराखंड की ऊँचाई वाली चरागाहों से लेकर पूर्वोत्तर के उपोष्णकटिबंधीय वनों तक, हिमालय क्षेत्र मशरूम की विविधता का भंडार है। कॉर्डिसेप्स मिलिटेरिस, प्लीयूरोटस (ऑयस्टर), शिटाके और मोरचेला (गुच्छी) जैसे प्रजातियाँ यहां पाई जाती हैं, जिनकी वैश्विक औषधीय बाजार में अत्यधिक मांग है। यह विविधता क्षेत्र के विस्तृत कृषि–जलवायु क्षेत्र और वनों से प्राप्त जैव अपशिष्टों की वजह से संभव हुई है। धान, मक्का और बागवानी फसलों के बचे हुए अवशेष मशरूम की खेती के लिए आदर्श माध्यम हैं। शिटाके जैसे मशरूम स्थानीय चौड़ी पत्ती वाले पेड़ों की बुरादे पर फलते हैं, जो हिमालयी वनों में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।

वैज्ञानिक नवाचार

भा.कृ.अनु.प.– खुम्ब अनुसंधान निदेशालय, सोलन ने मशरूम विज्ञान में अग्रणी कार्य किया है। बीते दशक में बटन, ऑयस्टर, शिटाके और मिल्की मशरूम की कई उच्च उपज वाली किस्में विकसित की गई हैं। रेडी–टू–फ्रूट बैग्स, शून्य–ऊर्जा पॉली–टनल (ZEPT) कम्पोस्टिंग और रासायनिक विसंक्रमण तकनीकों ने छोटे स्तर पर उत्पादन को सुलभ और लाभकारी बना दिया है। निदेशालय ने रोग प्रतिरोधी और उच्च उत्पादक किस्मों के साथ–साथ मशरूम नूडल्स, स्नैक बार, औषधीय अर्क और फोर्टिफाइड बिस्किट जैसे 25 से अधिक मूल्यवर्धित उत्पाद विकसित किए हैं, जो नई आय के स्रोत खोलते हैं और फसल के बाद की हानि को घटाते हैं।

प्रमुख चुनौतियाँ

- अवसंरचना की कमी– सीमित स्पॉन लैब, कोल्ड चेन, प्रसंस्करण इकाइयाँ और विपणन नेटवर्क।
- तकनीकी जानकारी की कमी– किसानों को रोग प्रबंधन, भंडारण और जलवायु नियंत्रण प्रशिक्षण की अनुपलब्धता।
- जलवायु परिवर्तन और वनों की कटाई– जंगली व कृषि मशरूम दोनों को खतरा।
- उच्च लागत– सब्सट्रेट, ऊर्जा और इकाई निर्माण की लागत सीमांत किसानों के लिए भारी पड़ती है।
- प्रवासन और निर्जन गाँव की समस्या ने कृषि को अलाभकारी बना दिया है।

रणनीतियाँ– मशरूम आधारित पुनरुत्थान की ओर

- स्पॉन सुरक्षा– प्रत्येक जिले में प्रमाणित स्पॉन लैब स्थापित हों, युवाओं को स्पॉन उत्पादन में प्रशिक्षित किया जाए।
- अनुसंधान और संरक्षण– स्थानीय प्रजातियों का संरक्षण, जीन बैंक, औषधीय अनुसंधान को प्राथमिकता दी जाए।
- एकीकृत कृषि प्रणाली– मशरूम को IFS का हिस्सा बनाकर अवशेषों का उपयोग व पोषक तत्वों की पुनरावृत्ति सुनिश्चित हो।
- प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन– सौर ड्रायर, कोल्ड चेन, जैव पैकेजिंग में निवेश हो। मशरूम–आधारित रेडी–टू–कुक उत्पाद व शाकाहारी मांस को बढ़ावा दिया जाए।
- क्षमता निर्माण– स्थानीय भाषा में प्रशिक्षण, महिलाओं और युवाओं को उद्यमिता के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।
- नीतिगत समर्थन वित्तीय प्रोत्साहन, सब्सिडी और निर्यात बाजार से जुड़ाव को बढ़ावा देने हेतु सक्षम नीतियाँ और संस्थागत ढांचा।
- पोषण और स्वास्थ्य प्रचार– मशरूम के पोषण एवं औषधीय लाभों पर जन जागरूकता अभियान चलाए जाने चाहिए

पहाड़ों की समृद्धि के लिए मशरूम

कम पानी, कम जगह और अधिक लाभ देने वाली मशरूम खेती पहाड़ी क्षेत्रों के लिए आदर्श है। हिमालय जैसे संवेदनशील और आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में यह पारिस्थितिकी और अर्थव्यवस्था को जोड़ने वाला एक शक्तिशाली साधन बन सकता है। मशरूम केवल एक फसल नहीं, बल्कि बदलाव के वाहक हैं दृ जो पोषण, आय, नवाचार और पारिस्थितिकी के बीच सेतु का काम करते हैं। यदि इन्हें उचित समर्थन मिले, तो मशरूम पहाड़ों की अगली हरित क्रांति बन सकते हैं।

ISSN: 3049-2211

फसल रोगों के लिए मौसम का प्रभाव

डॉ. एस.जी. घुगल– कीटशास्त्र विभाग
डॉ. साक्षी सिंह– सहायक प्राध्यापक, पौधरोग विज्ञान विभाग
जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पवारखेड़ा, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश।

मौसम और फसल रोगों के बीच सीधा संबंध है। मौसम की परिस्थितियाँ रोगों के प्रसार और तीव्रता को प्रभावित करती हैं। तापमान, आर्द्रता, वर्षा, हवा और धूप जैसे तत्व रोगजनकों के जीवनचक्र और संक्रमण की संभावनाओं को नियंत्रित करते हैं। अतः किसानों को मौसम की जानकारी रखते हुए फसल रोग प्रबंधन रणनीति अपनानी चाहिए जिससे समय रहते रोकथाम संभव हो सके।

परिचय

कृषि उत्पादन में मौसम की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, विशेष रूप से फसल रोगों की उत्पत्ति, प्रसार और तीव्रता में। विभिन्न मौसमीय घटक जैसे तापमान, आर्द्रता, वर्षा, हवा की गति एवं दिशा, धूप की अवधि आदि सीधे फसल रोगों की सक्रियता को प्रभावित करते हैं। मौसम यदि अनुकूल हो तो रोगजनक सूक्ष्मजीवों (फफूंदी, जीवाणु, विषाणु आदि) की वृद्धि तीव्र हो जाती है और वे फसल को बड़े पैमाने पर संक्रमित कर सकते हैं। अतः फसल रोग प्रबंधन में मौसम आधारित पूर्वानुमान और रणनीति का विकास आवश्यक है।

मौसम और फसल रोगों के बीच संबंध

1. तापमान का प्रभाव

- अधिकांश रोगजनक सूक्ष्मजीवों के लिए 20–30° से. तापमान उपयुक्त होता है।
- अधिक तापमान पर जीवाणुजनित रोग जैसे बैक्टीरियल ब्लाइट, विल्ट आदि बढ़ते हैं।
- कम तापमान पर कुछ फफूंदजनित रोग जैसे पाउडरी मिल्ड्यू, झुलसा रोग इत्यादि अधिक प्रभावी होते हैं।

2. नमी और आर्द्रता

- अत्यधिक आर्द्रता (80 प्रतिशत से अधिक) और पत्तियों पर जल का ठहराव फफूंदों को उगने का अनुकूल वातावरण देता है।
- रोग जैसे डाउनी मिल्ड्यू, लीफ ब्लाइट, रस्ट, पत्ती धब्बा रोग आदि नम वातावरण में तेजी से फैलते हैं।

3. वर्षा का प्रभाव

- अधिक वर्षा रोगों के प्रसार में सहायक होती है, विशेषतः वे रोग जो स्प्लैशिंग द्वारा फैलते हैं (जैसे लेट ब्लाइट, एन्थ्रेक्नोज)।
- लगातार वर्षा से जलभराव की स्थिति बनती है जिससे जड़ सड़न रोग बढ़ जाते हैं।

4. हवा की गति और दिशा

वायु के माध्यम से फैलने वाले रोग जैसे रस्ट, स्मट, डाउनी मिल्ड्यू तेज हवा में तेजी से दूर–दूर तक फैलते हैं।

5. सूर्य प्रकाश और तापमान अंतर

- कम धूप वाले और अत्यधिक नमी वाले मौसम में रोगजनक ज्यादा सक्रिय होते हैं।
- लगातार बादल छाए रहने से पत्तियों का वाष्पोत्सर्जन कम होता है जिससे पत्तियों पर पानी जमा रहता है और फफूंदजनित रोगों का प्रकोप बढ़ता है।

प्रमुख फसल रोग और उनका मौसम से संबंध

फसल	रोग	अनुकूल मौसमीय स्थिति
गेहूं	रस्ट रोग	ठंडी और नम जलवायु
चावल	ब्लास्ट, शीथ ब्लाईट	अधिक आर्द्रता, 25–30° से.
आलू	लेट ब्लाईट	ठंडा और नम मौसम
टमाटर	लीफ स्पॉट, फल सड़न	उच्च आर्द्रता, मध्यम तापमान
कपास	बैक्टीरियल ब्लाइट	गर्म एवं आर्द्र मौसम

मौसम आधारित रोग पूर्वानुमान

- रोग पूर्वानुमान मॉडल जैसे ब्लाइट कास्ट, पेस्टीसाइट एडवाइजरी सर्विस और IMD आधारित DSS अब किसानों को मौसम आधारित चेतावनी प्रदान करते हैं।
- आइसीटी आधारित मोबाइल एप्स जैसे Kisan Suvidha, Meghdoot, Mausam इत्यादि से किसान अपने क्षेत्र के मौसम के अनुसार रोग के खतरे का पूर्व अनुमान लगा सकते हैं।

मौसम अनुकूल प्रबंधन रणनीतियाँ

- मौसम पूर्वानुमान के अनुसार स्प्रे का समय निर्धारण।
- फसल चक्र एवं अंतरवर्तीय फसल अपनाना।
- बीजोपचार करना दृ विशेषकर नम मौसम में।
- प्रत्येक मौसम में रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन।
- जल निकासी की व्यवस्था, विशेषकर अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में।
- नियंत्रित सिंचाई और वाष्पोत्सर्जन कम करने की तकनीकें।
- संक्रमित अवशेषों को नष्ट करना, जिससे अगले मौसम में रोग न फैले।

निष्कर्ष

फसल रोगों की समय पर और सटीक पहचान के लिए मौसम की भूमिका अत्यंत निर्णायक होती है। बदलते मौसमीय परिस्थितियों के अनुरुप यदि किसान वैज्ञानिक और जैविक उपायों को समय पर अपनाएं, तो फसलों को गंभीर रोगों से बचाया जा सकता है। प्ब्ज उपकरणों और मौसम आधारित रोग चेतावनी सेवाओं का उपयोग कर रोग प्रबंधन की प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार मौसम की समझ और तकनीकी जानकारी के समन्वय से फसल रोगों पर स्थायी और सुरक्षित नियंत्रण संभव है, जो सतत कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

***

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

प्राकृतिक संसाधन में रिमोट सेंसिंग और जीआईएस

शिवम् पाण्डेय
परियोजना वैज्ञानिक
रिमोट सेंसिंग एप्लीकेशन्स सेंटर, उत्तर प्रदेश।

प्राकृतिक संसाधन जैसे जल, भूमि, वन, खनिज, और जैव विविधता मानव जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, औद्योगीकरण और अनियंत्रित उपयोग के कारण इन संसाधनों पर अत्यधिक दबाव पड़ा है। ऐसे में इन संसाधनों का सतत, वैज्ञानिक और कुशल प्रबंधन आवश्यक हो गया है। रिमोट सेंसिंग (दूर संवेदन) और जीआईएस (भौगोलिक सूचना प्रणाली) तकनीकों ने इस दिशा में क्रांतिकारी परिवर्तन लाए हैं।

रिमोट सेंसिंग वह तकनीक है जिसके माध्यम से पृथ्वी की सतह की जानकारी उपग्रह या हवाई यंत्रों से एकत्र की जाती है, बिना सीधे संपर्क में आए। इससे भू–आकृति, भूमि उपयोग, वनावरण, जल स्रोत, और मौसम संबंधी आंकड़े प्राप्त किए जा सकते हैं।

जीआईएस एक कंप्यूटर आधारित प्रणाली है जो भौगोलिक डेटा को संग्रहित, विश्लेषण, प्रबंधन और प्रदर्शित करने में सक्षम है। यह अलग–अलग प्रकार के डेटा (मानचित्र, उपग्रह चित्र, जनसंख्या आँकड़े, मिट्टी की गुणवत्ता आदि) को एक साथ मिलाकर समझदारी से निर्णय लेने में सहायता करता है।

रिमोट सेंसिंग तकनीक से भूमि के विभिन्न उपयोग जैसे कृषि, वनों, बंजर भूमि, शहरी क्षेत्र आदि की जानकारी समय–समय पर प्राप्त की जा सकती है। जीआईएस इन आंकड़ों को विश्लेषण कर यह दर्शाता है कि किस प्रकार भूमि उपयोग में परिवर्तन हो रहा है।

वनों की सीमा, घनत्व, कटाव, और पुनरुद्धार की स्थिति का आकलन रिमोट सेंसिंग से संभव है। जीआईएस की सहायता से इन सूचनाओं का विश्लेषण कर अवैध कटाई की पहचान, वन क्षेत्र का नियोजन तथा जैव विविधता संरक्षण किया जा सकता है।

तालाब, नदियाँ, जलाशय, भूजल आदि के आंकड़ों को रिमोट सेंसिंग द्वारा इकट्ठा किया जाता है। वर्षा पैटर्न, बाढ़ का पूर्वानुमान, सूखा प्रभावित क्षेत्र की पहचान, जल संचयन योजनाएँ कृ ये सभी कार्य जीआईएस की सहायता से योजनाबद्ध रूप से किए जा सकते हैं।

मिट्टी की उर्वरता, क्षरण, लवणता, और जलधारण क्षमता जैसी विशेषताओं की निगरानी रिमोट सेंसिंग से की जा सकती है। जीआईएस के माध्यम से उपयुक्त फसल चयन, उर्वरक प्रबंधन और मृदा संरक्षण योजनाएँ बनाई जा सकती हैं।

शहरीकरण के कारण भूमि उपयोग में तीव्र बदलाव आ रहे हैं। रिमोट सेंसिंग से नए विकास क्षेत्रों की पहचान की जा सकती है जबकि जीआईएस के माध्यम से बेहतर आधारभूत ढांचे (सड़क, जल आपूर्ति, सीवेज आदि) की योजना बनाई जा सकती है।

बाढ़, भूकंप, भूस्खलन, सूखा आदि प्राकृतिक आपदाओं के समय रिमोट सेंसिंग त्वरित जानकारी प्रदान करता है। जीआईएस तकनीक से संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान, राहत कार्यों की योजना और पुनर्वास कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार की जाती है।

रिमोट सेंसिंग, पृथ्वी पर मौजूद विशेषताओं को समझने और जानकारी प्राप्त करने का एक तरीका है, चाहे वह भौतिक विशेषता हो या जैविक विशेषता, बिना सीधे संपर्क या स्पर्श के, यह एक क्रांतिकारी दृष्टिकोण है। प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन और संरक्षण में रिमोट सेंसिंग और जीआईएस का आजकल बड़े पैमाने पर उपयोग किया जा रहा है। इस तकनीकी दृष्टिकोण ने बहुत कम समय में मौजूदा प्राकृतिक संसाधनों के अतीत, वर्तमान और भविष्य के परिदृश्य का अध्ययन करने में मदद की, जो पारंपरिक तरीकों से पालन किए जाने पर कई सालों में हो जाता। विभिन्न सेंसरों के साथ लगाए गए विभिन्न अंतरिक्ष प्लेटफार्मों द्वारा कैप्चर की गई ऐतिहासिक छवियों के विश्लेषण ने दशकों के दौरान परिवर्तनों के प्रकार का अध्ययन करके पृथ्वी पर विभिन्न घटनाओं की भविष्यवाणी करना संभव बना दिया।

रिमोट सेंसिंग और जीआईएस तकनीकों ने प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन की दिशा में नई संभावनाओं के द्वार खोल दिए हैं। इन तकनीकों की मदद से न केवल संसाधनों की सटीक निगरानी संभव हुई है, बल्कि योजनाबद्ध और वैज्ञानिक रूप से उनका उपयोग भी सुनिश्चित किया जा सका है। भारत जैसे विकासशील देश में, जहां संसाधनों पर अत्यधिक दबाव है, वहां इन तकनीकों का प्रभावी प्रयोग न केवल वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक होगा, बल्कि भावी पीढ़ियों के लिए संसाधनों के सतत संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

***

ISSN: 3049-2211

धान में लगने वाले प्रमुख कीट, रोग एवं उनकी रोकथाम

निखिल कुमार श्रीवास्तव, डॉ0 बाल मुकुंद पाण्डेय, डॉ0 नवीन विक्रम सिंह, एवं डॉ0 राहुल कुमार
कीट विज्ञान विभाग,
कृषि संकाय, कमला नेहरू भौतिक एवं सामाजिक विज्ञान संस्थान, सुल्तानपुर (उ0प्र0)।

परिचय

धान एक महत्वपूर्ण फसल है यह विश्व भर में बोई जाती है इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के व्यंजनों के रूप में किया जाता है जैसे चावल, पोहा, आटा इत्यादि यह भारत मे खरीफ के मौसम मे जुन जुलाई मे बोई जाती हैं। लेकिन धान की खेती मे किसानों को कई कठिनाईया का सामना करना पड़ता है जिसमें से कुछ निम्न हैं जैसे कि कीट और रोग इत्यादि धान के प्रमुख कीट–

1. तना छेदक कीट

कीट की पहचान– तना छेदक कीट वयस्क मॉँथ आमतौर पर भूरा या धूसर रंग का होता है इसके पंखों पर अक्सर गहरे रंग के धब्बे या धारियां होती है। इसके लार्वा सफेद या क्रीमी रंग का होता है।

क्षति की प्रकृति– तना छेदक कीट की मादा पत्तियों पर समूह में अंडा देती हैं अंडा से लार्वा निकाल कर तना के मुख्य भाग को खाती है जिससे पौधों का तना सूखने लगता है और बालियों में दाने नहीं बनते हैं जिससे बालीया सफेद दिखाई देती है इस कीट का प्रकोप धान के फसल में दो समय पर ज्यादा दिखाई देता है पहला जब फसल 20–30 दिन का होता है और दूसरा फसल फुटाव के समय होती हैं तब।

रोकथाम–

- ✓ फेरोमोन ट्रैप का उपयोग।
- ✓ कारटैप हइड्रोक्लोराइड 4% जी आर 8 किग्रा/एकड़ उपयोग करें।
- ✓ इमामेक्टिन बेंजोएट 5% एस.जी. 100 ग्राम/एकड़।
- ✓ क्लोरेट्रानिलिप्रोल 18.5% एस.सी. 50–60 मि० ली०/एकड़

2. पत्ती लपेटक कीट

कीट की पहचान– वयस्क मॉँथ छोटे आकार के होते हैं और रात में सक्रिय रहते हैं लार्वा हरा या सफेद रंग का होता है और पत्तियों को लपेट कर रखता है।

क्षति कि प्रकृति– पत्ती लपेटक के मादा कीट धान के शिराओं के पास समूह में अंडा देती हैं अण्डे से 6–8 दिन के अंदर लार्वा निकलते है यह लार्वा पहले मुलायम पत्तियों को खाते हैं और बाद में अपने लार से रेशमी धागा बनाकर पत्तियों को किनारो से मोड़ देते हैं और अंदर ही अंदर पत्तियों को खुरच कर खाती हैं जिससे पत्तियां सफेद दिखाई देने लगती है।

रोकथाम–

- ✓ क्लोरट्रैनिलिप्रोल 18.5% एस.जी. 3 मि०ली०/ली० पानी।
- ✓ हाइड्रोक्लोराइड 50% डब्लू. पी. 10 ग्राम/10 ली० पानी।

3. हरा फुदका कीट

कीट की पहचान– वयस्क हर फुदका कीट हरे रंग का होता है और पंखों के साथ तेजी से उड़ता है शिशु भी हरे रंग के होते हैं और पत्तियों पर चूसने के गतिविधियों में शामिल होते है।

क्षति की प्रकृति– यह कीट पौधों के सभी अवस्था में हमला करता है यह किट अपना अंडा पतियों के मध्य शिरा पर ही देते हैं इस कीट के अंडे सफेद और हल्के पीले रंग के होते हैं इस कीट के शिशु और वयस्क दोनों ही पत्तियो रस चूस कर पौधों को कमजोर बना देती हैं।

रोकथाम–

- ✓ थायोमिथाक्शाम 25% डब्ल्यू यू जी की 40 ग्राम/200 ली० पानी/एकड़।
- ✓ एसीफेट 9% + बुप्रोफेजीन 24% डब्ल्यू यू पी की 240 ग्राम/200 ली० पानी/एकड़।
- ✓ फ्लोनिकामाइड 50% डब्लू यू जी की 60 ग्राम/200 ली० पानी/एकड़।

4. भूरा फुदका कीट/भूरा माहू कीट

कीट की पहचान– वयस्क कीट का रंग भूरा तथा शिशु का रंग भूरा होता है यह पौधों से रस चूस कर पौधों को कमजोर बना देता है।

क्षति की प्रकृति– इस कीट का वयस्क और शिशु दोनों पौधों का रस चूसते हैं और इसका आक्रमण पौधों के निचले तने भाग से शुरू होता हैं यह धान के फसल के लिए काफी खतरनाक साबित होते हैं ज्यादा प्रकोप होने पर 70–75% नुकसान होता हैं

रोकथाम–

- ✓ ट्राई फलोरोबेंजोपाइरीन 10% एस सी 100 मी०ली०/एकड़ 150–200 ली० पानी में।
- ✓ पीईमेट्रोजॉइन 50% डब्लू जी 120 ग्राम/एकड़ 150–200 ली० पानी में।
- ✓ डिनोटिफरान 20% एस 60 ग्राम/एकड़ 150 ली० पानी में।

5. गन्धी बाग कीट

कीट की पहचान– इस कीट का वयस्क भूरे रंग का तथा शिशु भी भूरा ही होता हैं इसके टांगे लंबे होते हैं तथा इनमें से एक विशेष गंध निकलती है।

क्षति की प्रकृति– इस कीट का प्रकोप बालियां में दूधिया अवस्था में होता है यह कीट बालियों से रस चूस लेते हैं जिससे बालियों में चावल नहीं बनते हैं।

रोकथाम–

- ✓ लेमबडा केलोथ्रीन 5% ई सी 200 मी०ली०/एकड़ 150 ली० पानी में।
- ✓ क्लोरोपैरिफास 50% साइपरमेथिलिन 25% 3 मी०ली०/पानी में।
- ✓ क्यूनालफास 1.5% या मैलाथियान 7–8 किलो ग्राम/एकड़।

ISSN: 3049-2211

6. सैनिक कीट

कीट की पहचान– वयस्क सैनिक कीट एक मोथ होता है जो रात में सक्रिय रहते हैं इसके लार्वा हरा या भूरा रंग का होता हैं और यह समूह में चलते हैं।

क्षति कि प्रकृति– इस कीट का लार्वा का प्रकोप नर्सरी से लेकर बालियां अवस्था तक रहती हैं यह लार्वा समूह में चलती हैं तथा यह पौधों के पत्तियों को खाती हैं तथा काट कर गिरा देती हैं और बालियों अवस्था में भी बालियों को काट कर गिरा देती है।

रोकथाम–

- ✓ क्यूनालफास 25% ई सी 12–50 मी०ली०/हेक्टेयर।
- ✓ क्लोरोपैरिकफोस 20% ई सी 12–50 मी०ली०/हेक्टेयर।
- ✓ मिथाइल पैराथियान 2% चूर्ण 25–30 किलो ग्राम/हेक्टेयर

धान के प्रमुख रोग

1. झुलसा रोग

रोग की पहचान एवं क्षति की प्रकृति–

यह रोग बुवाई के 15 दिन बाद से फसल के पकते समय तक होता है रोग शुरुआती अवस्था में पौधे के निचले पत्तियों पर हल्के बैंगनी रंग के छोटे–छोटे धब्बे बनाते हैं जो धीरे–धीरे बढ़कर एक गोलाकार आकर बना लेते हैं जिसमें अंदर के तरफ भूरा रंग हो जाता है और गोला के किनारो पर मैरून रंग और उसके आगे पीला रंग दिखाई देता है इसका प्रकोप तना के गाठों पर भी होता है जिससे गांठ काली होकर सड़कर कर टूट जाती है जिससे फसल के उपज में नुकसान होता हैद्य

रोकथाम–

- ✓ टेबुकोनाजोल 25.9% ई सी (फंगीसाइड) 250 मि०ली०/एकड़।
- ✓ मैंकोजेब दवा की 600–800 ग्राम मात्रा प्रति एकड़ की दर से 4–5 छिड़काव प्रत्येक 15 दिनों के अंतराल पर।
- ✓ हेक्साकोनाजोले 5% एस सी 2 मि०ली०/पानी में।

2. भूरी चित्ती रोग–

रोग की पहचान एवं क्षति की प्रकृति–

यह एक बीज जनित रोग है इसका प्रकोप पत्तियों पर गोलाकार भूरे धब्बे बनाते हैं इस रोग के कारण पौधों की बढ़वार कमजोर होती हैं चुकी गोलाकार धब्बे आपस में मिल जाती हैं जिसके कारण पूरा पौधा सूख जाता है।

रोकथाम–

- ✓ कार्बेन्डाजिन 50% डब्लू पी (फंगीसाइड) 400 ग्राम/एकड़।
- ✓ एज़ोक्सीस्ट्रोबिन 18.2% + डिफ़ेनोकोनाज़ोल 11.4% एस सी 300 मिलीलीटर/एकड़।

3. खैरा रोग

रोग की पहचान एवं क्षति की प्रकृति–

पत्तियों पर हल्के पीले रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में कत्थई रंग के हो जाते हैं पौधे बौने हो जाते हैं जिससे कले का फुटाव कम हो जाता है यह रोग जिंक की कमी के करण होता है

रोकथाम–

- ✓ जिंक सल्फेट 33% 5 किलोग्राम/एकड़।
- ✓ 15 लीटर पानी में 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट और 0.2 प्रतिशत बुझा हुआ चूना मिलाकर फसल पर 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

4. हल्दीया रोग

रोग की पहचान एवं क्षति की प्रकृति–

धान में हल्दी रोग लगने का मूल कारण मौसम में परिवर्तन होना है बालियों में जब दाना भरने का समय होता हैं तभी इसका प्रकोप होता है दोनों पर पीले रंग की मखमली क्रीम दिखाई देता है। पौधा हिलाने पर हल्दी के पाउडर जैसे धूल उड़ाने लगते हैं। दानों में काला राख जैसे पाउडर भर जाते हैं यह एक बहुत गंभीर रोग है।

रोकथाम–

बाली निकलने से पहले

कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50% डब्लू पी (फंगीसाइड) 300 ग्राम/एकड़ 200 लीटर पानी में डालकर स्प्रे करें।

बाली निकलने के बाद

प्रोपेनोजोल 25% इ सी 300 मि०ली०/एकड़ 200 लीटर पानी में डालकर स्प्रे करें।

5. नेक बलास्ट रोग/गर्दन तोड़ रोग

रोग की पहचान एवं क्षति की प्रकृति–

यह रोग एक फफूंद जनित्र रोग है इसका प्रकोप फसल में बलिया निकलने के बाद होता है। इस रोग में बालियों के निचले भाग पर काले रंग का धब्बा बनता है जिससे धान के बाले एक तरफ झुक कर टूट जाती हैं। इस रोग के कारण बोलियों में दूध नहीं पहुंचता है जिससे वह खोखली रह जाती हैं।

रोकथाम–

- ✓ ट्राईकोजोल 75% डब्लू पी (फंगीसाइड) 160 ग्राम/एकड़ 150 लीटर पानी में घोलकर स्प्रे करें।
- ✓ फेनबुकार्व 50 ई सी की 300 मिली तथा आईसोप्रोथियोलेन 40 ई सी 300 मिली 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ के छिड़काव करें।

***

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

पौधों के रोग: कारण, लक्षण और समाधान

डॉ. एस.जी. घुगल– कीटशास्त्र विभाग
डॉ. साक्षी सिंह– सहायक प्राध्यापक, पौधरोग विज्ञान विभाग
जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पवारखेड़ा, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश।

पौधों के रोग कृषि उत्पादन में एक गंभीर बाधा हैं, जो जैविक (कवक, जीवाणु, विषाणु आदि) और अजैविक (पोषक तत्वों की कमी, मौसम, रासायनिक असंतुलन आदि) कारणों से उत्पन्न होते हैं। इनके लक्षणों में पीलापन, धब्बे, सड़न, विकृति और गिरना शामिल हैं। समय पर पहचान, रोगग्रस्त भागों का हटाना, जैविक व रासायनिक उपायों का संतुलित प्रयोग, रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन और समेकित रोग प्रबंधन के माध्यम से इनका प्रभावी नियंत्रण संभव है। सतर्कता और वैज्ञानिक उपायों को अपनाकर किसान फसल की सुरक्षा और उत्पादन दोनों बढ़ा सकते हैं।

भूमिका

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है और पौधों की सेहत कृषि उत्पादन का आधार होती है। परंतु जैसे मनुष्यों को बीमारियाँ होती हैं, वैसे ही पौधों को भी कई प्रकार के रोग हो सकते हैं जो उनकी वृद्धि, उपज और गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। यह रोग फसल उत्पादन में भारी हानि पहुंचाते हैं और किसानों की मेहनत और आमदनी पर सीधा असर डालते हैं। अतः यह आवश्यक है कि हम पौधों में होने वाले रोगों को अच्छी तरह समझें, उनके कारण, लक्षण और उपयुक्त समाधान अपनाएं।

पौधों के रोग के प्रमुख कारण

पौधों में रोग उत्पन्न होने के कई कारण होते हैं, जिन्हें दो मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

1. जैविक कारण–

यह रोग जीवित सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं, जैसे–

- कवक– सबसे सामान्य रोगजनकय जैसे रतुआ, झुलसा, तना गलन आदि।
- जीवाणु– जैसे बैक्टीरियल ब्लाइट, विल्ट आदि।
- विषाणु– जैसे लीफ कर्ल, मोजेक रोग, येलो वायरस।
- मायकोप्लाज्मा– जैसे लीफ येलो रोग।
- निमेटोड– जैसे जड़ गाँठ रोग।

2. अजैविक कारण

यह रोग वातावरण या पोषण की गड़बड़ियों के कारण होते हैं, जैसे–

- जलवायु का प्रभाव– अत्यधिक वर्षा, ओलावृष्टि, सूखा।
- मिट्टी की खराब स्थिति– पी.एच. असंतुलन, लवणता, जल जमाव।
- पोषक तत्वों की कमी या अधिकता।
- रासायनिक विषाक्तता– कीटनाशकों, उर्वरकों का अधिक प्रयोग।

पौधों में रोगों के सामान्य लक्षण

रोगग्रस्त पौधे कुछ विशिष्ट लक्षण दिखाते हैं, जिन्हें देखकर बीमारी की पहचान की जा सकती है–

1. पत्तियों में लक्षण

- पीलापन– पोषक तत्वों की कमी या वायरस के कारण।
- धब्बे– फफूंद या जीवाणु से संक्रमण।
- झुलसना– पत्तियों का तेजी से सूखना।

2. तनों में लक्षण

- तना गलन– तना काला और सड़ा हुआ।
- फटाव– फंगस या निमेटोड का असर।

3. जड़ों में लक्षण

- जड़ सड़न– मृदा जनित रोग।
- गांठ बनना– निमेटोड संक्रमण।

4. फल एवं फूल में लक्षण

- फल सड़न।
- विकृति।
- झड़ना।

रोगों के समाधान और नियंत्रण के उपाय

रोगों को नियंत्रित करने के लिए हमें समेकित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। इसे हम रोग प्रबंधन कहते हैं, जो कि रोकथाम, नियंत्रण और उपचार तीनों को मिलाकर एक रणनीति बनाता है।

1. सांस्कृतिक नियंत्रण

- फसल चक्र अपनाना।
- समय पर बुवाई और कटाई।
- रोगमुक्त बीजों का उपयोग।
- खेत में जल निकासी व्यवस्था।
- संक्रमित पौध भागों का नष्ट करना।

2. यांत्रिक नियंत्रण

- संक्रमित पौधों का खेत से हटाना।
- रोगग्रस्त हिस्सों की छंटाई।

3. जैविक नियंत्रण

- सूक्ष्मजीवों का प्रयोग।
- नीम आधारित अर्क या वानस्पतिक कीटनाशकों का छिड़काव।

4. रासायनिक नियंत्रण

- फफूंदनाशक– जैसे मैनकोजेब, कार्बेन्डाजिम।
- जीवाणुनाशक– जैसे स्टैपटोमाइसिन, कॉपर ऑक्सीक्लोराइड।
- वायरस का कोई प्रत्यक्ष इलाज नहीं होता, लेकिन वायरस वाहक कीटों (जैसे सफेद मक्खी) को नियंत्रित किया जा सकता है।

5. प्रतिरोधी किस्मों का चयन

रोग प्रतिरोधी किस्में उगाना सबसे आसान और स्थायी उपाय है।

6. आईपीएम

जैविक, रासायनिक और सांस्कृतिक उपायों को मिलाकर किया गया समन्वित रोग प्रबंधन ही आज के समय में सबसे सफल रणनीति मानी जाती है।

कुछ प्रमुख फसलों के रोग और उनके समाधान

फसल	प्रमुख रोग	नियंत्रण उपाय
गेहूं	रतुआ, झुलसा	रोगमुक्त बीज, मैनकोजेब का छिड़काव
धान	शीथ ब्लाईट, झुलसा	ट्राइकोडर्मा, कार्बेन्डाजिम
टमाटर	लीफ कर्ल वायरस	सफेद मक्खी नियंत्रण, रोगमुक्त पौध
मिर्च	डैम्पिंग ऑफ	थिरम बीजोपचार, ट्राइकोडर्मा
आलू	झुलसा रोग	रोग प्रतिरोधी किस्में, फफूंदनाशक

सावधानी और जागरूकता– किसान के लिए संदेश

- खेत का नियमित निरीक्षण करें।
- बीमारी के लक्षणों को पहचानने का प्रशिक्षण लें।
- रासायनिक दवाओं का संतुलित और सुरक्षित प्रयोग करें।
- जैविक उपायों को प्राथमिकता दें।
- स्थानीय कृषि विज्ञान केंद्र या विशेषज्ञ से सलाह अवश्य लें।

निष्कर्ष

पौधों के रोग न केवल फसल की उपज को घटाते हैं बल्कि किसानों की मेहनत और अर्थव्यवस्था को भी प्रभावित करते हैं। रोगों से मुकाबला करने के लिए हमें पारंपरिक ज्ञान, वैज्ञानिक तकनीकों और सतर्कता तीनों का संयोजन अपनाना होगा। समय पर रोग की पहचान, उचित प्रबंधन विधियाँ और सतत जागरूकता ही स्वस्थ फसल और समृद्ध किसान का आधार हैं।

■■■

ISSN: 3049-2211

सफेद लट का जीवन चक्र एवं उनका प्रबन्धन

पूजा कुमारी*, किशोर कुमार यादव, शकुंतला एवं सैफ अली खान
पी.एच.डी. शोधार्थी
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा, जयपुर।

प्रस्तावना

सफेद लट एक खतरनाक और बहुभक्षी कीट है। इसको मई–जून भृंग भी बोला जाता है क्योंकि ये मानसून की पहली बरसात के दौरान निकलती हैं। इसका जीवन चक्र एक साल का होता है। यह हल्की बालू मिट्टी वाले क्षेत्रों में उगने वाली खरीफ की फसलो जैसे– मूंगफली, बाजरा, मोठ, सब्जियों फलो इत्यादि पौधों को हानि पहुंचाती है। इय कीट की लट अवस्था पौधों की जड़ों एवं वयस्क अवस्था पौधों की पत्तियों को नुकसान पहुंचाती है जिससे पौधा सूखकर मर जाता है। भारत में भृंगों की बहुत प्रजातियाँ पाई जाती है। परन्तु बालू मिट्टी वाले क्षेत्रों में *होलोट्राईकिया कंसेंगुनिया* प्रजाति की लट अत्यधिक नुकसान पहुंचाती है। सफेद लट दूसरी और तीसरी अवस्था जड़ों को ज्यादा नुकसान पहुंचाती है। जिससे फसलो, की उत्पादन एवं उत्पादकता पर बड़ा असर पड़ रहा है। इस कीट को नियंत्रित करने के लिए और इससे होने वाले नुकसान से बचने के लिए इसके जीवन चक्र की जानकारी हासिल करना बहुत आवश्यक हैं।

पहचान–

अंडा– नाशपाती के आकार एवं सकेद भूरे रंग होता है। मादा अंडे मिट्टी में लगभग 8 –10 सेमी गहराई पर देती है।

लार्वा– सफेद लट का लार्वा सी–आकार का सफेद या भूरे रंग का होता है और इसका सर भूरे रंग का होता है।

प्यूपा (शंकु)– यह गहरे भूरे रंग का होता है और मिट्टी में गहराई में पाया जाता है।

वयस्क भृंग– जंग खाये हुये लाल रंग जैसा दिखता है। और बाद में काले रंग में परिवर्तित हो जाता है।

अंडा

लार्वा

प्यूपा

वयस्क भृंग

जीवन चक्र–

होलोट्राईकिया कंसेंगुनिया प्रजाति का जीवन चक्र एक साल होता हैं। यह एक साल में केवल एक ही पीढ़ी पूर्ण करती है। मानसून की, पहली वर्षा के पश्चात इस कीट के भृंग सांय काल के समय मिट्टी से बाहर निकलते हैं। मादा भृंग अपने शरीर से विशेष प्रकार का रसायन (फेरोमोन) वायु में विसर्जित करती है। जिससे नर भृंग इससे आकर्षित होकर मादा भृंग की ओर जाते है और समागन करते हैं। मादा भृंग समागन के 3–4 दिन बाद 8–10 सेमी गहराई, में अंडे देना शुरू कर देती है। अण्डों में से 2 सप्ताह बाद प्रथम अवस्था की लट निकलती है। इसकी लम्बाई 15 मिलीमीटर की होती है, इसके बाद यह द्वितीय अवस्था में परिवर्तित हो जाती है जिसकी लम्बाई लगभग 35 मिलीमीटर की होती है। करीब 4–5 सप्ताह तक द्वितीय अवस्था में रहने के पश्चात् यह लट अन्तिम अवस्था में परिवर्तित हो जाती है जो औसतन 41 मिलीमीटर लम्बाई की होती है। लट की यह अन्तिम अवस्था करीब 6–8 सप्ताह तक रहती है। यही द्वितीय व तृतीय अवस्थाएं पौधे अधिक नुकसान पहुँचाती है। इस प्रकार लट का पूर्ण जीवन काल करीब 12–15 सप्ताह का होता है इसके पश्चात् यह लटें भूमि में गहराई में चली जाती हैं और तकरीबन 40–70 से.मी. गहराई पर शंकु में परिवर्तित हो जाती है। शंकु से लगभग 2 सप्ताह पश्चात प्रौढ़ भृंग निकल आते हैं। जो अगली वर्षा आने तक भूमि की लगभग 1 मीटर तक गहराई में चले जाते हैं। इस समय यह भृंग निष्क्रिय होकर भूमि पड़े रहते हैं।

प्रबन्धन–

सफेद लट का प्रबन्धन दो तरीके से किया जा सकता है। पहला जब यह लट की प्रथम अवस्था में हो और दूसरा जब यह व्यस्क (भृंग) अवस्था में हो। सफेद लट के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ.एस. 6.5 मिली./किलोग्राम बीज से उपचारित करें। इस कीटनाशी की मात्रा फसल के अनुसार परिवर्तित होती रहती है जैसे बाजरे में इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ. एस. को 8.75 मिली. /किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें। व्यस्क भृंग के नियंत्रण के लिए मई के बाद पहली अच्छी वर्षा के तुरन्त बाद वृक्षों पर, कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. का 1.5 मिली. /लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए और पहली वर्षा के पश्चात वृक्षों पर 2–3 नैनोजेल मेथॉक्सीबेंजीन फेरोमोन लगाने चाहिये।

***

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

मोरिंगा की वैज्ञानिक खेती और औषधीय महत्व

प्रज्ञा महोबे, स्नेहल गुप्ता और उज्जवल कुमार
पी.एच.डी. शोधार्थी
पादप कार्यिकी, कृषि जैव रसायन, औषधीय एवं सुगंधित पौधे विभाग,
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ।

परिचय

मोरिंगा (*Moringa oleifera*), जिसे सहजन, ड्रमस्टिक ट्री, या मिरेकल ट्री के नाम से जाना जाता है, भारत के उत्तरी और दक्षिणी क्षेत्रों का मूल निवासी एक तेजी से बढ़ने वाला, सूखा–सहिष्णु पौधा है। यह Moringaceae परिवार से संबंधित है और अपनी पत्तियों, फलियों, बीजों, फूलों, और जड़ों में मौजूद पोषक तत्वों और औषधीय गुणों के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। मोरिंगा की खेती भारत, अफ्रीका, दक्षिण–पूर्व एशिया, और मध्य अमेरिका में व्यापक रूप से की जाती है। भारत में, विशेष रूप से तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, राजस्थान, और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में, यह किसानों के लिए एक लाभकारी फसल बन रही है।

मोरिंगा को "मिरेकल ट्री" इसलिए कहा जाता है, क्योंकि इसके लगभग सभी भाग खाद्य, औषधीय, और औद्योगिक उपयोग के लिए उपयुक्त हैं। यह पौधा कम पानी, न्यूनतम उर्वरकों, और कम रखरखाव के साथ उगाया जा सकता है, जो इसे छोटे और मध्यम स्तर के किसानों के लिए एक टिकाऊ और आर्थिक रूप से व्यवहार्य विकल्प बनाता है। इसके अतिरिक्त, मोरिंगा जल शुद्धिकरण, पशु चारा, और जैव ईंधन उत्पादन में भी उपयोगी है।

मोरिंगा का महत्व और उपयोग

औषधीय महत्व

मोरिंगा की पत्तियाँ, बीज, फूल, और जड़ें पोषक तत्वों और जैव–सक्रिय यौगिकों, जैसे फ्लेवोनॉइड्स, पॉलीफेनॉल्स, आइसोथियोसाइनेट्स, और ग्लूकोसाइनोलेट्स से भरपूर हैं। ये यौगिक इसे विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं के उपचार और रोकथाम में प्रभावी बनाते हैं। नीचे मोरिंगा के प्रमुख औषधीय लाभ दिए गए हैं–

पोषक तत्वों का भंडार–

मोरिंगा की पत्तियाँ विटामिन A, C, E, B- कॉम्प्लेक्स, कैल्शियम, पोटैशियम, आयरन, मैग्नीशियम, और प्रोटीन का उत्कृष्ट स्रोत हैं। यह संतरे से 7 गुना अधिक विटामिन C, गाजर से 10 गुना अधिक विटामिन A, दूध से 17 गुना अधिक कैल्शियम, और पालक से 25 गुना अधिक आयरन प्रदान करता है। यह कुपोषण से लड़ने में विशेष रूप से उपयोगी है, खासकर बच्चों और गर्भवती महिलाओं में।

मधुमेह नियंत्रण–

मोरिंगा की पत्तियों में मौजूद क्वेरसेटिन और क्लोरोजेनिक एसिड रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करते हैं। यह इंसुलिन संवेदनशीलता को बढ़ाता है और टाइप–2 मधुमेह के प्रबंधन में सहायक है। अध्ययनों में पाया गया है कि मोरिंगा का नियमित सेवन उपवास रक्त शर्करा को 13–20% तक कम कर सकता है।

एंटी–इंफ्लेमेटरी गुण–

मोरिंगा में मौजूद आइसोथियोसाइनेट्स और फ्लेवोनॉइड्स सूजन पैदा करने वाले साइटोकिन्स को कम करते हैं। यह गठिया, जोड़ों के दर्द, और पुरानी सूजन संबंधी रोगों में राहत प्रदान करता है।

हृदय स्वास्थ्य–

मोरिंगा कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड्स के स्तर को कम करता है, जिससे हृदय रोगों का जोखिम कम होता है। इसके

एंटीऑक्सीडेंट गुण रक्त वाहिकाओं को स्वस्थ रखते हैं और उच्च रक्तचाप को नियंत्रित करते हैं।

- **पाचन स्वास्थ्य–**

मोरिंगा की पत्तियों और फलियों में उच्च फाइबर सामग्री पाचन तंत्र को स्वस्थ रखती है। यह कब्ज को रोकता है, आंतों की गतिशीलता को बढ़ाता है, और पाचन एंजाइमों के उत्पादन को प्रोत्साहित करता है।

- **रक्ताल्पता में सुधार–**

उच्च आयरन और फोलिक एसिड सामग्री के कारण मोरिंगा रक्ताल्पता (एनीमिया) को कम करता है। यह लाल रक्त कोशिकाओं के उत्पादन को बढ़ाता है और हीमोग्लोबिन के स्तर को सुधारता है।

आर्थिक महत्व

मोरिंगा की खेती कम लागत और उच्च लाभ के कारण आकर्षक है। इसकी पत्तियाँ, फलियाँ, बीज, और तेल खाद्य, औषधि, और कॉस्मेटिक उद्योगों में उपयोग होते हैं। प्रति हेक्टेयर 2–3 टन सूखी पत्तियाँ और 1–1.5 टन फलियाँ प्राप्त हो सकती हैं, जिनकी बाजार कीमत क्रमशः 100–200 रुपये प्रति किलोग्राम और 20–50 रुपये प्रति किलोग्राम हो सकती है। मोरिंगा का तेल कॉस्मेटिक उद्योग में 2000–5000 रुपये प्रति लीटर की दर से बिकता है। इसके बीज जल शुद्धिकरण और पशु चारे के लिए भी उपयोगी हैं, जिससे किसानों को अतिरिक्त आय होती है।

मोरिंगा की खेती की विधि

किस्में (प्रचलित किस्में)

मोरिंगा की खेती की सफलता में सही किस्म का चयन महत्वपूर्ण है। भारत में निम्नलिखित प्रचलित किस्में उपयुक्त हैं–

- **PKM–1–** तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित, उच्च उपज देने वाली किस्म। यह फलियों और पत्तियों की अधिक पैदावार देती है और गर्म जलवायु के लिए उपयुक्त है।
- **PKM–2–** PKM–1 का उन्नत संस्करण, अधिक फलियाँ और पत्तियाँ देता है। यह रोग–प्रतिरोधी है और दक्षिण भारत के लिए आदर्श है।
- **दुंडा–** राजस्थान और शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त, सूखा–सहिष्णु और कम रखरखाव वाली किस्म।
- **कोयंबटूर–1–** उच्च पत्ती उत्पादन और पोषक तत्वों के लिए जानी जाती है, दक्षिण भारत में लोकप्रिय।
- **रोहित–1–** उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त, तेजी से बढ़ने वाली और अधिक बीज उत्पादन वाली।
- **ओडिशा–6–** ओडिशा और पूर्वी भारत के लिए विकसित, आर्द्र जलवायु में अच्छा प्रदर्शन करती है।

किस्म का चयन क्षेत्र की जलवायु, मिट्टी, और बाजार की मांग (पत्ती, फली, या बीज) के आधार पर करें।

मिट्टी और जलवायु

मोरिंगा रेतीली दोमट मिट्टी (पी.एच. 6.3–7.0) में सर्वोत्तम बढ़ता है, लेकिन यह दोमट और चिकनी मिट्टी में भी उग सकता है। यह 25–35 डिग्री सेल्सियस तापमान में अच्छा प्रदर्शन करता है, लेकिन 15–45 डिग्री सेल्सियस तक सहन कर सकता है। मोरिंगा सूखा–सहिष्णु है, लेकिन जलभराव जड़ों को नुकसान पहुँचाता है, इसलिए जल निकासी आवश्यक है।

खेत की तैयारी एवं दूरी

- **खेत की तैयारी–** गहरी जुताई (25–30 सेमी) करके खेत को समतल करें। खरपतवार और पुराने पौधों के अवशेष हटाएँ।
- **गड्ढों की तैयारी–** 60×60×60 सेमी के गड्ढे 1 मीटर की दूरी पर तैयार करें। प्रत्येक गड्ढे में 5–10 किग्रा गोबर की खाद, 100 ग्राम नीम खली, और 50 ग्राम सुपर फॉस्फेट डालें। गड्ढों को 10–15 दिन पहले तैयार करें ताकि खाद अच्छी तरह मिट्टी में मिल जाए।
- मिट्टी को जैविक खाद से समृद्ध करने के लिए वर्मीकम्पोस्ट या हरी खाद का उपयोग करें।

बुवाई की विधियाँ

मोरिंगा को दो मुख्य विधियों से उगाया जाता है–

(क) बीज द्वारा

- ✓ बीज चयन– स्वस्थ, परिपक्व, और रोगमुक्त बीज चुनें।
- ✓ बीज उपचार– बेहतर अंकुरण के लिए बीजों को 12–24 घंटे पानी में भिगोएँ।
- ✓ बुवाई– 1–2 बीज प्रति गड्ढा, 1–2 सेमी गहराई में, 1 मीटर की दूरी पर बोएँ। गड्ढों को हल्की मिट्टी से ढकें।
- ✓ अंकुरण– बीज 7–14 दिनों में अंकुरित हो जाते हैं।

(ख) कटिंग द्वारा

- ✓ कटिंग चयन– 1.5–2 मीटर लंबी और 4–5 सेमी मोटी स्वस्थ शाखाएँ चुनें।
- ✓ रोपण– कटिंग को 30–40 सेमी गहराई में सीधे खेत में गाड़ें। कटिंग को रूटिंग हार्मोन में डुबोने से जड़ें जल्दी विकसित होती हैं।
- ✓ लाभ– यह विधि वानस्पतिक रूप से सच्ची किस्मों (जैसे PKM–1, PKM–2) के विस्तार के लिए उपयोगी है, क्योंकि यह माता–पिता पौधे के गुणों को बनाए रखती है।

सिंचाई

मोरिंगा को कम पानी की आवश्यकता होती है। रोपण के बाद पहले 2–3 महीनों में सप्ताह में 2–3 बार हल्की सिंचाई करें। ड्रिप सिंचाई सबसे प्रभावी है, क्योंकि यह पानी की बचत करती है। स्थापित पौधों को मिट्टी की नमी के आधार पर हर 7–10 दिन में पानी दें। जल निकासी अच्छी होनी चाहिए, क्योंकि जलभराव जड़ सड़न का कारण बन सकता है। पानी की विद्युत चालकता 0.5–0.8 डीएस/एम होनी चाहिए।

खाद और पोषक तत्व

मोरिंगा की खेती में जैविक खाद को प्राथमिकता दें। प्रति हेक्टेयर 5–6 टन गोबर खाद या 2–3 टन वर्मीकम्पोस्ट डालें। रासायनिक उर्वरकों के रूप में नाइट्रोजन (20 किग्रा/हेक्टेयर), फॉस्फोरस (20 किग्रा/हेक्टेयर), और पोटाश (20 किग्रा/हेक्टेयर) रोपण के समय और फिर हर 3 महीने बाद दो बार में दें। जस्ता और मैग्नीशियम जैसे माइक्रोन्यूट्रिएंट्स की कमी होने पर फोलियर स्प्रे का उपयोग करें। नीम खली का उपयोग मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और कीटों को रोकने के लिए करें।

खरपतवार और रोग प्रबंधन

खरपतवार नियंत्रण

- ✓ मैन्युअल निकाई– रोपण के पहले 30–45 दिनों में नियमित निकाई–गुड़ाई करें ताकि खरपतवार पौधों के साथ पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा न करें।
- ✓ मल्चिंग– जैविक मल्च, जैसे सूखी घास, पत्तियाँ, या चावल की भूसी, का उपयोग खरपतवार को दबाने और मिट्टी की नमी बनाए रखने के लिए करें।

रोग और कीट प्रबंधन

मोरिंगा सामान्यतः रोगों और कीटों के प्रति प्रतिरोधी है, लेकिन कुछ समस्याएँ हो सकती हैं–

- ✓ फफूंद रोग– पाउडरी मिल्ड्यू (*Leveillula taurica*) और रूट रॉट (*Rhizoctonia solani*) से बचाव के लिए नीम तेल या जैविक फफूंदनाशी, जैसे ट्राइकोडर्मा (5 किग्रा/हेक्टेयर), का छिड़काव करें। अच्छी जल निकासी रूट रॉट को रोकती है।
- ✓ कीट– कैटरपिलर (*Noorda blitealis*) और फल मक्खी (*Gitona distigmata*) पत्तियों और फलियों को नुकसान पहुँचा सकते हैं। नीम आधारित कीटनाशी (2–3 मिली/लीटर पानी) या फेरोमोन ट्रैप प्रभावी हैं।

फसल की कटाई और उपज

मोरिंगा की पहली कटाई रोपण के 6–8 महीने बाद की जाती है, जब पौधे लगभग 1.5–2 मीटर ऊँचे हो जाते हैं। पत्तियों और फलियों की कटाई हेतु पौधों को 1–1.5 मीटर की ऊँचाई पर काटा जाता है ताकि नई शाखाएँ विकसित हो सकें। साल में दो बार फल देनेवाली किस्मों की तुड़ाई सामान्यतया फरवरीदृमार्च और सितम्बर–अक्टूबर में होती है। प्रत्येक पौधे से सालभर में लगभग 200–400 (या 40–50 किलोग्राम) फलियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। तुड़ाई बाजार और उपज मात्रा के अनुसार 1–2 माह तक चलती है। फलियों को उस समय तोड़ना चाहिए जब उनमें रेशा न आया हो, ताकि उनकी गुणवत्ता बनी रहे और बाजार में मांग अधिक मिले। अच्छी किस्में जैसे PKM–1 और PKM–2 प्रति पौधा 200–300 फलियाँ दे सकती हैं। प्रति वर्ष 3–4 कटाइयाँ संभव हैं, जिनसे प्रति हेक्टेयर 2–3 टन सूखी पत्तियाँ और 1–1.5 टन फलियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। पत्तियों को छायादार और हवादार स्थान पर सुखाना चाहिए ताकि उनमें उपस्थित पोषक तत्व और प्राकृतिक रंग बरकरार रहें। इस प्रकार वैज्ञानिक तरीके से की गई मोरिंगा की खेती से किसानों को अच्छा आर्थिक लाभ मिल सकता है।

विपणन और भविष्य की संभावनाएँ

विपणन

मोरिंगा की पत्तियाँ, पाउडर, तेल, और बीज की मांग खाद्य, औषधि, और कॉस्मेटिक उद्योगों में तेजी से बढ़ रही है। किसान निम्नलिखित तरीकों से अपनी उपज बेच सकते हैं–

- ❖ स्थानीय बाजार– ताजा फलियाँ और पत्तियाँ स्थानीय सब्जी मंडियों में बेची जा सकती हैं।
- ❖ अनुबंध खेती– पतंजलि, हिमालया, डाबर, और गोदरेज जैसी कंपनियाँ मोरिंगा पाउडर और तेल के लिए अनुबंध करती हैं।
- ❖ निर्यात– मोरिंगा पाउडर और तेल यूरोप, अमेरिका, और मध्य पूर्व में उच्च मांग में हैं। गुणवत्ता मानकों (जैसे FSSAI, USDA Organic) का पालन करें।
- ❖ जल शुद्धिकरण और अन्य उपयोगरू मोरिंगा के बीज जल शुद्धिकरण और पशु चारे के लिए बेचे जा सकते हैं।

भविष्य की संभावनाएँ

मोरिंगा की मांग स्वास्थ्य और पोषण के प्रति बढ़ती जागरूकता के साथ बढ़ रही है। भारत सरकार और संस्थान, जैसे राष्ट्रीय औषधीय पादप बोर्ड (NMPB) और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR), मोरिंगा की खेती को बढ़ावा देने के लिए सब्सिडी और प्रशिक्षण प्रदान कर रहे हैं। भविष्य में, निम्नलिखित क्षेत्रों पर ध्यान देने से इसकी संभावनाएँ और बढ़ेंगी–

- अनुसंधान– नई प्रजातियों, जैसे PKM–2 और ओडिशा–6, और प्रसंस्करण तकनीकों पर शोध से उपज और गुणवत्ता में सुधार होगा।
- प्रशिक्षण– किसानों को वैज्ञानिक खेती, जैविक प्रमाणन, और बाजार रणनीतियों के लिए प्रशिक्षण।
- बाजार विकास– मोरिंगा आधारित उत्पादों, जैसे चाय, कैप्सूल, और सौंदर्य प्रसाधनों, के लिए नए बाजार।

निष्कर्ष

मोरिंगा की वैज्ञानिक खेती कम लागत, उच्च पोषक मूल्य, और बहुमुखी उपयोग के कारण किसानों के लिए एक टिकाऊ और लाभकारी विकल्प है। इसकी प्रचलित किस्में, जैसे PKM–1 और PKM–2, उच्च उपज और रोग–प्रतिरोधकता प्रदान करती हैं। बीज और कटिंग से रोपण, उचित खेत तैयारी, और वैज्ञानिक प्रबंधन से उपज बढ़ाई जा सकती है। इसके औषधीय गुण, जैसे मधुमेह नियंत्रण, हृदय स्वास्थ्य, कैंसर विरोधी प्रभाव, और कुपोषण से लड़ने की क्षमता, इसे "मिरेकल ट्री" बनाते हैं। वैज्ञानिक तकनीकों, उचित प्रबंधन, और बाजार रणनीतियों के साथ, मोरिंगा की खेती न केवल आर्थिक लाभ प्रदान करती है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण और सामुदायिक स्वास्थ्य में भी योगदान देती है।

ISSN: 3049-2211

तना गलन और कंद गलन रोग का प्रबंधन

डॉ. एस.जी. घुगल– कीटशास्त्र विभाग
डॉ. साक्षी सिंह– सहायक प्राध्यापक, पौधरोग विज्ञान विभाग
जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पवारखेड़ा, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश।

तना गलन और कंद गलन रोग फसलों की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। ये रोग अधिकतर गीली, नम और संक्रमित परिस्थितियों में पनपते हैं। इनका नियंत्रण केवल रासायनिक उपायों से संभव नहीं, बल्कि जैविक उपाय जैसे *Trichoderma*, जल निकासी, फसल चक्र, बीज उपचार, और उचित सफाई से किया जा सकता है। यह न केवल फसल की सुरक्षा सुनिश्चित करता है, बल्कि मिट्टी और पर्यावरण को भी संरक्षित करता है।

परिचय

तना गलन और कंद गलन रोग दो गंभीर फसलजनित रोग हैं जो विभिन्न प्रकार की फसलों जैसे आलू, अरबी, गन्ना, हल्दी, अदरक, फूलगोभी और मूली इत्यादि को प्रभावित करते हैं। इन रोगों का कारण मुख्यतः फफूंद जैसे *Rhizoctonia solani*, *Sclerotium rolfsii*, *Pythium* spp. और *Phytophthora* spp. होते हैं। यदि इन रोगों की समय पर पहचान और प्रबंधन न किया जाए, तो यह भारी आर्थिक नुकसान का कारण बनते हैं।

रोग के कारण

तना गलन

- *Sclerotium rolfsii* द्वारा होता है।
- उच्च आर्द्रता और 25–30° से. तापमान पर रोग तीव्रता बढ़ती है।
- संक्रमित मिट्टी और पौध अवशेष रोग फैलाते हैं।

कंद गलन

- मुख्य रूप से *Pythium* spp., *Phytophthora* spp. और *Fusarium* spp. द्वारा।
- अधिक नमी, जलभराव और खराब जल निकासी प्रमुख कारण हैं।
- संक्रमित बीज या कंद रोग फैलाते हैं।

लक्षण

तना गलन

- पौधे के तने के आधार पर सड़ा हुआ घाव।
- सफेद या भूरे रंग का फफूंदीय जाल दिखाई देता है।
- पौधा अचानक मुरझाकर गिर जाता है।

कंद गलन

- कंदों में नरम, बदबूदार और गहरे धब्बे।
- कटाई के बाद भंडारण में कंद सड़ने लगते हैं।
- फसल की उपज में 50 प्रतिशत तक की कमी हो सकती है।

रोकथाम एवं जैविक प्रबंधन

1. बीजोपचार

- जैविक एजेंट *Trichoderma harzianum* या *Pseudomonas fluorescens* से बीज का उपचार करें।
- 10 ग्राम *Trichoderma* प्रति किलोग्राम बीज पर प्रयोग करें।

2. मिट्टी उपचार

- खेत की मिट्टी में *Trichoderma viride* 2.5 किग्रा प्रति एकड़, 100–200 किलो गोबर खाद के साथ मिलाकर प्रयोग करें।
- खेत की गहरी जुताई करें और पुरानी फसल के अवशेष हटाएं।

3. फसल चक्र

- संक्रमित फसल के स्थान पर दालें या अनाज फसल लगाएं।
- फसल चक्र से मिट्टी में रोग कारक की संख्या कम होती है।

4. जल प्रबंधन

- खेत में जल निकासी की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- अधिक नमी और जलभराव से बचाव आवश्यक है।

5. साफ–सफाई और अवशेष प्रबंधन

- खेत से रोगग्रस्त पौधों को तुरंत निकालकर नष्ट करें।
- भंडारण से पूर्व कंदों की जांच करें।

6. जैविक स्प्रे

- *Trichoderma harzianum* आधारित जैविक स्प्रे को 10 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
- नीम खली (150–200 किग्रा प्रति हेक्टेयर) मिट्टी में मिलाएं।

कृषि विशेषज्ञों की सिफारिशें

- जैविक विधियों का नियमित और समयबद्ध उपयोग करें।
- गोबर खाद और कंपोस्ट का प्रयोग रोग प्रतिरोधात्मक क्षमता बढ़ाने में सहायक होता है।
- जैविक उत्पादों से भूमि की उर्वरता बनी रहती है और पर्यावरण भी सुरक्षित रहता है।

निष्कर्ष

तना गलन और कंद गलन जैसे रोगों का सतत समाधान केवल जैविक और समेकित प्रबंधन उपायों के माध्यम से ही संभव है। रासायनिक कीटनाशकों पर अत्यधिक निर्भरता से पर्यावरण को नुकसान होता है और रोग कारकों में प्रतिरोध भी विकसित हो सकता है। इसलिए, जैविक बीजोपचार, मिट्टी उपचार, जल प्रबंधन और रोगग्रस्त अवशेषों का समुचित निपटान करके किसान इन रोगों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित कर सकते हैं। यह न केवल फसल उत्पादन बढ़ाने में मदद करेगा, बल्कि स्वस्थ और टिकाऊ कृषि पद्धतियों को भी प्रोत्साहन देगा।

■■■

ISSN: 3049-2211

केंचुआ खाद: समृद्ध मृदा स्वास्थ्य का आधार

मीनाक्षी मीना– एमएससी (कृषि)
उद्यान विज्ञान, राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)।
टी.एस. चैत्रा– वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
डॉ. हेमराज मीना, प्रधान वैज्ञानिक
आईसीएआर– भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, अनुसंधान केंद्र, कोटा (राजस्थान)।

केंचुआ किसान का एक अच्छा मित्र है। कार्बनिक पदार्थ जैसे– घरेलू कचरा, शहरी कचरा, कृषि अवशेष, खरपतवार, पशुओं का गोबर, छिलके (जो गल सके) आदि के मिश्रण के पश्चात् केंचुओं द्वारा विसर्जित पदार्थ को केंचुआ खाद या वर्मीकम्पोस्ट कहतें है। केंचुआ खाद न सिर्फ केचुओं द्वारा बल्कि कई सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा भी बनता है। जो फसलों, सब्जियों, पौधों व वृक्षों की बढ़वार और रोगो से रक्षा के लिए पूर्ण रूप से प्राकृतिक एवं संतुलित खाद है केंचुआ खाद में नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश के अतिरिक्त पौधो की वृद्धि एवं विकास में सहायक अनेक लाभदायक सूक्ष्म पोषक तत्व एवं जीवाणु, हार्मोन और अनेक एन्जाइम भी पाये जाते है।

केंचुआ खाद तैयार करने के लिए सतही केचुए, जो मृदा सतह पर किसी भी सड़ते हुए कार्बनिक पदार्थो को खाते है, प्रयोग किये जाते है। इन्हें इपीजैइक (Epigeic) के नाम से भी जाना जाता है। अन्य दो प्रकार के जिसमे एण्डोजैईक (Endogeic) भूमी की खनिजयुक्त पर्तो में रहकर मिट्टी का भक्षण करते है एवं एनेसिक (इपीजैइक एवं एण्डोजैईक दोनो की विशेषताओ का इस्तेमाल करते है।) भूमी में गहरी सुरंग बनाकर रहते हैं एवं पत्तियां खाने के लिए सतह पर आते है ।

केंचुआ खाद क्यों

- ✓ इनमें गोबर खाद की तुलना से सवा गुना अधिक पोषक तत्व पाये जाते है।
- ✓ इसमें पाया जाने वाला ह्यूमिक एसिड, भूमि के पी0एच0 मान को संतुलित रखता है।
- ✓ वानस्पतिक पदार्थो को 40–45 दिन में ही खाद में बदल देता है।
- ✓ मिट्टी की भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणवत्ता में सुधार आता है।
- ✓ बंजर भूमि सुधार, मछली पालन और नर्सरी में भी वर्मीकम्पोस्ट उपयुक्त है।
- ✓ इस प्रकार से तैयार खाद में दीमक का प्रकोप नहीं होता है।
- ✓ इसमें अनेक तत्व होते हैं, जो पौधों की रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाकर फसल का उत्पादन बढ़ाते है।
- ✓ मृदा संरचना तथा वायु संचार में सुधार हो जाता है।
- ✓ जलकुम्भी की समस्या का स्थायी निदान है।
- ✓ इसके प्रयोग से नाइट्रोजन तत्व की भूमि में लीचिंग नही होती है।
- ✓ इसके प्रयोग से मिट्टी की जल ग्रहण क्षमता में वृद्धि होती है।

पौषक तत्वों का स्तर

पोषक तत्व	मात्रा
जीवांश कार्बन	20 – 25 प्रतिशत
नत्रजन	1.2 –2.5 प्रतिशत
फास्फोरस	1.8 –2.0 प्रतिशत
पोटाश	0.5 –1.2 प्रतिशत
मैगनीशियम	0.15 प्रतिशत
कैल्शियम	0.44 प्रतिशत
लोहा (आयरन)	175.2 पी.पी.एम.
मैंगनीज	96.51 पी.पी.एम.
जिंक	24.43 पी.पी.एम.
कॉपर (ताँबा)	4.89 पी.पी.एम.

खाद बनाने की विधि

- ✓ खाद बनाने का कार्य गड्ढे, लकड़ी की पेटी, प्लास्टिक क्रेट या किसी प्रकार के कन्टेनर मे किया जा सकता है। पेटी की गहराई 1 मीटर से कम रखें।
- ✓ लकड़ी या प्लास्टिक की पेटी में नीचें 8–10 छेद जल निकास हेतु बनाएं।
- ✓ 10 फीट लम्बा × 2.5 फीट चौड़ा × 1.5 से 2.0 फीट गहरा गड्ढा ऊँचाई तथा छायादार जगह पर बना लें।
- ✓ सबसें निचली सतह पर 3–3.5 सेमी. मोटी ईट या पत्थर की गिट्टी बिछायें।
- ✓ गिट्टी की परत के ऊपर 15 सेमी अच्छी दोमट मिट्टी की परत बनाएं।
- ✓ इसके बाद 1 किग्रा केंचुए ड़ाल दें।
- ✓ नम मिट्टी के ऊपर गोबर के ढेर बनाकर रख दें।
- ✓ गोबर के ऊपर 5–10 सेमी पुआल/सूखी पत्तियाँ ड़ाल दें।
- ✓ इस इकाई में बराबर 20–25 दिन तक पानी का छिड़काव करें।
- ✓ 26वें दिन से प्रति सप्ताह दो बार लगभग 5 –10 सेमी कचरे की तह बनाएं तथा गोबर का ढ़ेर बनाकर रख दें। यह प्रक्रिया दोहरातें रहे जब तक कि गड्ढा भर न जाये।
- ✓ इसे हफ्ते में एक बार पलटते रहें
- ✓ रोज पानी का छिडकाव करें जब गड्ढा भर जाये तो कचरा ड़ालना बन्द कर दें।
- ✓ 40 – 45 दिन बाद जब वर्मीकम्पोस्ट बन जाये तो 2 से 3 दिन तक पानी का छिड़काव बन्द कर दें।
- ✓ उसके बाद खाद निकाल कर छाया में ढ़ेर लगा दें और हल्का सूखने के बाद 2 मि0 मी0 छन्ने से छान लें। इस तैयार खाद में 20 – 25 प्रतिशत नमी होनी चाहिए।

खाद निकालने की विधि

- ✓ खाद निकालने के दो तीन दिन पूर्व पानी का छिड़काव बन्द कर दें, इससें केचुएं गड्ढे की तली में चले जायेगें।
- ✓ ऊपर से खाद को एक दो दिन बाद हाथ से अलग कर ले या मौरंग चलाने वाले छलने से छान लें तथा फर्श में नीचे पड़े केचुओं को पुनः गड्ढे में डाल दे।
- ✓ छनी खाद का प्लास्टिक के थेलों में भरकर रखें।

कृषक मंच

ISSN: 3049-2211

केंचुआ खाद बनाने की विधि, प्रयोग एवं पौधो पर

ट्रेन्च / गड्ढा भरना

छाया मे वर्मीकल्चर बेड

एसीनीया फटिडा केंचुआ

फलदार पौधो में केंचुआ खाद प्रयोग विधि

फलदार पौधो की बढवार पर केंचुआ खाद का प्रभाव

प्रयोग विधि एवं मात्रा

- ✓ वर्मीकम्पोस्ट को फसलों की बुआई या रोपाई से पूर्व और खड़ी फसल में ड़ाल सकते है।
- ✓ खाद्यान्न फसलों में 5–6 टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।
- ✓ 2.5 से 3 टन प्रति हेक्टयर खेती की तैयारी के वक्त प्रयोग करें। 1.2 से 1.5 टन प्रति हेक्टेयर फसल की दूधिया अवस्था पर प्रयोग करें।
- ✓ फलदार वृक्षों में 1 से 10 किग्रा आवश्यकतानुसार थाले में प्रयोग करें।
- ✓ गमलों मे 100 ग्राम प्रति गमले की दर से प्रयोंग करे ।
- ✓ सब्जी फसलों में 10–12 टन प्रति हेक्टयर प्रयोग करते है।

सावधानियां

- ✓ ताजा गोबर का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए क्योंकि इसके सड़ने से ऊर्जा निकलती है। और गर्मी से केचुए मर जाते है।
- ✓ बेड में नमी, छाया, 8 से 30 डिग्री तक तापमान तथा हवा का प्रवाह बनाये रखें।
- ✓ केंचुओं को मेंढ़क, गिरगिट, सापों, चिड़िया, कौवा, छिपकली एवं लाल चींटी आदि शत्रुओं से रक्षा करें।
- ✓ कूड़ा कचरा भी गीला एवं ठंण्ड़ा कर केचुओं के भोजन के रूप में प्रयोग करें।
- ✓ बेड की गुड़ाई / पलटाई प्रत्येक सप्ताह करें, जिससें पोलापन बना रहें तथा केचुओं को हवा मिले।
- ✓ गड्ढे की भराई धीरें धीरें करें नहीं तो तापमान बढ़ने से केंचुओं को हानि होती है। गड्ढा छायादार ऊँचाई पर बना हो।

■■■

ISSN: 3049-2211

प्राकृतिक मिठास की खेती: स्टीविया का वैज्ञानिक दृष्टिकोण

सतभिषा नायक– पीएच.डी. शोधार्थी, सस्य विज्ञान विभाग, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, (छत्तीसगढ़)।
उज्ज्वल कुमार– पी.एच.डी. शोधार्थी, पादप कार्यकी, कृषि जैव रसायन, औषधीय एवं सुगंधित पौधे विभाग, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, (छत्तीसगढ़)।

परिचय

स्टीविया (Stevia rebaudiana) एक औषधीय और आर्थिक महत्व का पौधा है, जो दक्षिण अमेरिका के पैराग्वे और ब्राजील जैसे देशों का मूल निवासी है। यह पौधा अपनी पत्तियों में मौजूद प्राकृतिक मिठास के लिए विश्व भर में प्रसिद्ध है। स्टीविया की पत्तियों में स्टीवियोसाइड, रिबौडियोसाइड–ए, और रिबौडियोसाइड–सी जैसे यौगिक पाए जाते हैं, जो चीनी से 100 से 300 गुना अधिक मीठे होते हैं, लेकिन इनमें कैलोरी की मात्रा शून्य होती है। यह गुण स्टीविया को मधुमेह रोगियों, वजन नियंत्रण करने वालों, और स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ताओं के लिए एक आदर्श मिठास का स्रोत बनाता है।

भारत में स्टीविया की खेती हाल के वर्षों में तेजी से लोकप्रिय हो रही है, विशेष रूप से कर्नाटक, महाराष्ट्र, उत्तराखंड, जम्मू–कश्मीर, और पंजाब जैसे राज्यों में। यह फसल न केवल आर्थिक दृष्टिकोण से लाभकारी है, बल्कि पर्यावरण के लिए भी अनुकूल है, क्योंकि इसे कम पानी और न्यूनतम रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता होती है। स्टीविया की खेती छोटे और मध्यम स्तर के किसानों के लिए एक व्यवहार्य विकल्प बन रही है, क्योंकि यह उच्च लाभ देती है और इसकी मांग खाद्य, औषधि, और कॉस्मेटिक उद्योगों में लगातार बढ़ रही है।

स्टीविया का महत्व और उपयोग

औषधीय महत्व

स्टीविया एक प्राकृतिक मिठास प्रदान करने वाला पौधा है, जो अपनी पत्तियों में मौजूद स्टीवियोसाइड, रिबौडियोसाइड–ए, और अन्य यौगिकों के कारण औषधीय गुणों से युक्त है। यह मिठास का स्रोत होने के साथ–साथ विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं के उपचार में उपयोगी है। नीचे स्टीविया के औषधीय महत्व के प्रमुख बिंदु संक्षेप में प्रस्तुत किए गए हैं–

- **मधुमेह रोगियों के लिए सुरक्षित मिठास–** स्टीविया की पत्तियाँ चीनी से 100–300 गुना अधिक मीठी हैं, लेकिन कैलोरी–मुक्त हैं। यह रक्त शर्करा को प्रभावित नहीं करता और टाइप–2 मधुमेह रोगियों में इंसुलिन संवेदनशीलता को बेहतर बनाता है। इसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स शून्य है, जो इसे मधुमेह रोगियों के लिए आदर्श बनाता है।
- **वजन नियंत्रण में सहायक–** कैलोरी–मुक्त होने के कारण स्टीविया मोटापे से जूझ रहे लोगों के लिए उपयुक्त है। यह मीठे की लालसा को कम करता है, जिससे वजन प्रबंधन में मदद मिलती है।
- **उच्च रक्तचाप का नियंत्रण–** स्टीवियोसाइड रक्त वाहिकाओं को शिथिल करता है, जिससे रक्तचाप कम होता है। यह हृदय स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है और हाइपरटेंशन के जोखिम को कम करता है।

- **एंटीऑक्सीडेंट गुण–** स्टीविया में मौजूद पॉलीफेनॉल्स और फ्लेवोनॉइड्स मुक्त कणों को बेअसर करते हैं, जिससे ऑक्सीडेटिव तनाव, कैंसर, और हृदय रोगों का जोखिम कम होता है।
- **दंत स्वास्थ्य को बढ़ावा–** स्टीविया दाँतों में सड़न पैदा करने वाले बैक्टीरिया को रोकता है, प्लाक और दंत क्षय को कम करता है, और प्राकृतिक माउथवॉश व टूथपेस्ट में उपयोग होता है।
- **एंटी–इंफ्लेमेटरी गुण–** स्टीविया सूजन पैदा करने वाले साइटोकिन्स को कम करता है, जो गठिया और त्वचा की समस्याओं, जैसे मुहाँसे और एक्जिमा, में राहत देता है।
- **एंटी–माइक्रोबियल गुण–** स्टीविया के अर्क बैक्टीरिया और फफूंद, जैसे स्टैफिलोकोकस और कैंडिडा, के खिलाफ प्रभावी हैं। यह घावों के उपचार और उत्पादों की शेल्फ लाइफ बढ़ाने में सहायक है।
- **आयुर्वेद और पारंपरिक चिकित्सा–** स्टीविया का उपयोग आयुर्वेद में मधुमेह, उच्च रक्तचाप, और पाचन समस्याओं के उपचार के लिए बढ़ रहा है। यह तनाव और अवसाद को कम करने में भी सहायक है।
- **मेटाबॉलिक स्वास्थ्य में सुधार–** स्टीविया मेटाबॉलिक सिंड्रोम के लक्षणों, जैसे इंसुलिन प्रतिरोध और उच्च ट्राइग्लिसराइड्स, को कम करता है, जिससे मेटाबॉलिक स्वास्थ्य बेहतर होता है।
- **त्वचा देखभाल में उपयोग–** स्टीविया के एंटीऑक्सीडेंट और एंटी–इंफ्लेमेटरी गुण झुर्रियों, मुहाँसों, और त्वचा की सूजन को कम करते हैं। यह त्वचा को नमी प्रदान करता है।
- **प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूती–** स्टीविया के एंटीऑक्सीडेंट और एंटी–माइक्रोबियल गुण बैक्टीरियल और वायरल संक्रमणों से बचाते हैं और प्रतिरक्षा कोशिकाओं की कार्यक्षमता को बढ़ाते हैं।

ISSN: 3049-2211

- **पाचन स्वास्थ्य को बढ़ावा–** स्टीविया पाचन तंत्र को स्वस्थ रखता है, कब्ज को कम करता है, और आयुर्वेद में पाचन समस्याओं के उपचार के लिए उपयोगी है।

आर्थिक महत्व

स्टीविया की खेती किसानों के लिए एक लाभकारी व्यवसाय है। इसकी पत्तियों की मांग खाद्य उद्योग में मिठास के स्रोत के रूप में, औषधि उद्योग में हर्बल उत्पादों के लिए, और कॉस्मेटिक उद्योग में प्राकृतिक अवयव के रूप में तेजी से बढ़ रही है। वैश्विक स्तर पर, जापान, कोरिया, और संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों में स्टीविया का उपयोग चीनी के विकल्प के रूप में 40% से अधिक मिठास की जरूरतों को पूरा करता है। भारत में भी, स्टीविया आधारित उत्पादों, जैसे पाउडर, टैबलेट, और तरल मिठास, का बाजार तेजी से विस्तार कर रहा है।

स्टीविया की खेती का एक प्रमुख लाभ यह है कि यह एक बारहमासी फसल है, जिससे एक बार रोपण के बाद कई वर्षों तक उपज प्राप्त की जा सकती है। प्रति हेक्टेयर 2.5 से 3 टन सूखी पत्तियाँ प्राप्त हो सकती हैं, जिनकी बाजार में कीमत 50 से 120 रुपये प्रति किलोग्राम तक हो सकती है। इस तरह, एक हेक्टेयर से 8–10 लाख रुपये तक की आय प्राप्त की जा सकती है।

स्टीविया की प्रमुख प्रजातियाँ

स्टीविया की खेती की सफलता में प्रजाति का चयन एक महत्वपूर्ण कारक है। भारत की जलवायु और मिट्टी की विविधता को ध्यान में रखते हुए, निम्नलिखित प्रजातियाँ खेती के लिए उपयुक्त हैं–

1. एस.आर.बी.–123

यह प्रजाति दक्षिणी भारत, जैसे कर्नाटक, तमिलनाडु, और आंध्र प्रदेश, की गर्म और आर्द्र जलवायु के लिए उपयुक्त है। इसमें स्टीवियोसाइड की मात्रा 8–12% होती है, और यह प्रति वर्ष 4 से 5 कटाइयाँ दे सकती है। इसकी पत्तियाँ मध्यम आकार की होती हैं, और यह प्रजाति कम रखरखाव की मांग करती है।

2. एस.आर.बी.–512

यह प्रजाति उत्तरी भारत के मैदानी और पहाड़ी क्षेत्रों, जैसे पंजाब, हरियाणा, और उत्तराखंड, के लिए अधिक उपयुक्त है। इसमें स्टीवियोसाइड की मात्रा 9–12% होती है। यह ठंडी जलवायु में भी अच्छा प्रदर्शन करती है और रोगों के प्रति प्रतिरोधी है।

3. एस.आर.बी.–128

यह प्रजाति सबसे उन्नत मानी जाती है और भारत के विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में खेती के लिए उपयुक्त है। इसमें स्टीवियोसाइड की मात्रा 12% तक हो सकती है, और यह उच्च उपज देती है। इसकी पत्तियाँ बड़ी और रसीली होती हैं, जो इसे बाजार में अधिक मूल्यवान बनाती हैं।

प्रजाति का चयन करते समय क्षेत्र की मिट्टी, जलवायु, और बाजार की मांग को ध्यान में रखना चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि स्टीवियोसाइड की उच्च मात्रा की आवश्यकता है, तो एस.आर.बी.–128 को प्राथमिकता दी जा सकती है।

स्टीविया की खेती की विधि

स्टीविया की वैज्ञानिक खेती के लिए सही तकनीकों का पालन करना आवश्यक है। निम्नलिखित चरण इस प्रक्रिया को विस्तार से समझाते हैं–

मिट्टी और जलवायु

स्टीविया की खेती के लिए दोमट या रेतीली दोमट मिट्टी आदर्श है, जिसका पी.एच. मान 6.5 से 7.5 के बीच हो। मिट्टी में अच्छी जल निकासी की व्यवस्था होनी चाहिए, क्योंकि जलभराव स्टीविया के पौधों को नुकसान पहुँचा सकता है। यह पौधा 15 से 30 डिग्री सेल्सियस के तापमान में सबसे अच्छा विकसित होता है। 10 डिग्री सेल्सियस से नीचे और 41 डिग्री सेल्सियस से ऊपर का तापमान इसकी वृद्धि को प्रभावित करता है। भारत के अधिकांश क्षेत्र, जैसे मैदानी और निचले पहाड़ी क्षेत्र, इसकी खेती के लिए उपयुक्त हैं।

पौध सामग्री और रोपण

स्टीविया की खेती के लिए स्वस्थ और रोगमुक्त पौध सामग्री का चयन करना महत्वपूर्ण है। पौधों को निम्नलिखित दो तरीकों से तैयार किया जा सकता है–

- **कटिंग विधि–** स्वस्थ पौधों से 10–15 सेमी लंबी कटिंग ली जाती है और इन्हें नर्सरी में रोपा जाता है। कटिंग को रूटिंग हार्मोन में डुबोकर रोपने से जड़ें जल्दी विकसित होती हैं।
- **ऊतक संवर्धन (टिश्यू कल्चर)–** यह विधि उच्च गुणवत्ता वाली और एकसमान पौध सामग्री प्राप्त करने के लिए उपयोगी है। ऊतक संवर्धन से तैयार पौधे रोगमुक्त होते हैं और तेजी से बढ़ते हैं।
- **बीज से स्टीविया उगाने की विधि–** स्टीविया को बीज से उगाने के लिए अच्छे गुणवत्ता वाले बीजों का चयन कर नर्सरी ट्रे या क्यारी में बारीक मिट्टी और जैविक खाद के मिश्रण में बोया जाता है। हल्की सिंचाई और छायायुक्त वातावरण में 7–14 दिन में अंकुरण होता है। 6–8 सप्ताह बाद पौधों को खेत में रोपा जाता है।

रोपण के लिए 45 सेमी × 45 सेमी की दूरी उपयुक्त है, जिससे प्रति हेक्टेयर लगभग 50,000 पौधे रोपे जा सकते हैं। रोपण का सबसे अच्छा समय फरवरी–मार्च या सितंबर–अक्टूबर है, जब तापमान मध्यम होता है।

सिंचाई

स्टीविया को नियमित लेकिन नियंत्रित सिंचाई की आवश्यकता होती है। ड्रिप सिंचाई विधि सबसे उपयुक्त है, क्योंकि यह पानी की बचत करती है और पौधों की जड़ों तक सीधे नमी पहुँचाती है। प्रति सप्ताह 2–3 बार सिंचाई पर्याप्त होती है, लेकिन मिट्टी की नमी के आधार पर इसका समायोजन किया जाना चाहिए। पानी की गुणवत्ता उच्च होनी चाहिए, और इसकी विद्युत चालकता (इलेक्ट्रिक कंडक्टिविटी) 0.5 से 0.8 डीएस/एम के बीच होनी चाहिए। जलभराव से बचने के लिए खेत में अच्छी जल निकासी की व्यवस्था होनी चाहिए।

खाद और पोषक तत्व

स्टीविया की फसल को जैविक खादों का उपयोग प्राथमिकता दी जानी चाहिए। प्रति हेक्टेयर 5–6 टन गोबर की खाद

या 2–3 टन वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग करना चाहिए। इसके अतिरिक्त, रासायनिक उर्वरकों के रूप में नाइट्रोजन (30 किग्रा/हेक्टेयर), फॉस्फोरस (30 किग्रा/हेक्टेयर), और पोटाश (30 किग्रा/हेक्टेयर) की आवश्यकता होती है। उर्वरकों को दो या तीन बार में बाँटकर देना चाहिए, ताकि पौधों को निरंतर पोषक तत्व मिलते रहें। माइक्रोन्यूट्रिएंट्स, जैसे जस्ता और मैग्नीशियम, की कमी होने पर उनकी पूर्ति के लिए फोलियर स्प्रे का उपयोग किया जा सकता है।

खरपतवार नियंत्रण और रोग प्रबंधन

खरपतवार नियंत्रण

स्टीविया की फसल में खरपतवारों का नियंत्रण बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि ये पौधों के पोषक तत्वों और पानी को अवशोषित कर सकते हैं। खरपतवारों को हटाने के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं–

- **मैन्युअल निकाई–** रोपण के बाद पहले 30–45 दिनों में नियमित रूप से निकाई–गुड़ाई करनी चाहिए।
- **मल्चिंग–** जैविक मल्च, जैसे सूखी घास या पत्तियाँ, का उपयोग खरपतवारों को नियंत्रित करने और मिट्टी की नमी को बनाए रखने में मदद करता है।
- रासायनिक खरपतवारनाशी का उपयोग करने से बचना चाहिए, क्योंकि यह पौधों की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है।

रोग और कीट प्रबंधन

स्टीविया की फसल पर सामान्यतः रोगों और कीटों का प्रकोप कम होता है। फिर भी, कुछ सामान्य समस्याएँ और उनके समाधान निम्नलिखित हैं–

- **फफूंद जनित रोग–** पत्तियों पर सफेद धब्बे या फफूंदी की समस्या हो सकती है। इसके लिए नीम के तेल या जैविक फफूंदनाशी, जैसे ट्राइकोडर्मा, का छिड़काव किया जा सकता है।
- **कीट–** एफिड्स और मकड़ी कीट (माइट्स) कभी–कभी पौधों को नुकसान पहुँचा सकते हैं। इनके नियंत्रण के लिए नीम आधारित कीटनाशकों का उपयोग प्रभावी है।
- नियमित निगरानी और प्राकृतिक उपायों का उपयोग करके रासायनिक कीटनाशकों की आवश्यकता को कम किया जा सकता है।

फसल की कटाई और उपज

स्टीविया की फसल रोपण के लगभग 90–120 दिनों बाद पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती है। कटाई का समय बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि फूल आने के बाद पत्तियों में स्टीवियोसाइड की मात्रा कम हो जाती है। इसलिए, कटाई फूल आने से पहले, जब पत्तियाँ पूरी तरह विकसित हो जाएँ, कर लेनी चाहिए। कटाई के लिए पौधों को जमीन से 10–15 सेमी ऊपर से काटा जाता है, ताकि पौधे फिर से नई शाखाएँ विकसित कर सकें।

प्रति वर्ष 3 से 5 कटाइयाँ ली जा सकती हैं, जो जलवायु और प्रजाति पर निर्भर करता है। प्रति हेक्टेयर 2.5 से 3 टन सूखी पत्तियाँ प्राप्त हो सकती हैं। पत्तियों को सुखाने के लिए छायादार और हवादार स्थान का उपयोग करना चाहिए, ताकि उनकी गुणवत्ता बनी रहे। सुखाने की प्रक्रिया में सूर्य की सीधी रोशनी से बचना चाहिए, क्योंकि इससे स्टीवियोसाइड की मात्रा कम हो सकती है। सूखी पत्तियों की बाजार में कीमत 50 से 120 रुपये प्रति किलोग्राम तक हो सकती है, जो गुणवत्ता और स्टीवियोसाइड की मात्रा पर निर्भर करती है। इस तरह, एक हेक्टेयर से 8–10 लाख रुपये तक की आय प्राप्त की जा सकती है।

विपणन और भविष्य की संभावनाएँ

विपणन

स्टीविया की पत्तियों और इसके उत्पादों की मांग भारत और वैश्विक बाजारों में तेजी से बढ़ रही है। भारत में कई कंपनियाँ, जैसे गोदरेज, डाबर, और मायरोकंपनी, स्टीविया आधारित उत्पादों, जैसे पाउडर, टैबलेट, और तरल मिठास, का उत्पादन और विपणन कर रही हैं। किसान निम्नलिखित तरीकों से अपनी उपज बेच सकते हैं–

- ✓ **सहकारी समितियाँ–** स्थानीय सहकारी समितियों के माध्यम से पत्तियों की बिक्री की जा सकती है।
- ✓ **अनुबंध खेती–** कई कंपनियाँ किसानों के साथ अनुबंध खेती के लिए समझौते करती हैं, जिसके तहत वे पौध सामग्री और तकनीकी सहायता प्रदान करती हैं और उपज को निश्चित मूल्य पर खरीदती हैं।
- ✓ **स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय बाजार–** स्टीविया की पत्तियों और उत्पादों की मांग यूरोप, अमेरिका, और एशिया के बाजारों में भी है। निर्यात के लिए गुणवत्ता मानकों का पालन करना महत्वपूर्ण है।

भविष्य की संभावनाएँ

स्टीविया की खेती का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूकता और प्राकृतिक उत्पादों की मांग के कारण स्टीविया का बाजार लगातार बढ़ रहा है। भारत सरकार और विभिन्न राज्य सरकारें स्टीविया की खेती को बढ़ावा देने के लिए सब्सिडी और प्रशिक्षण कार्यक्रम चला रही हैं। राष्ट्रीय औषधीय पादप बोर्ड (NMPB) और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) जैसे संस्थान स्टीविया की खेती के लिए अनुसंधान और तकनीकी सहायता प्रदान कर रहे हैं।

निष्कर्ष

स्टीविया की वैज्ञानिक खेती भारतीय किसानों के लिए एक लाभकारी और टिकाऊ विकल्प है। यह न केवल आर्थिक रूप से लाभकारी है, बल्कि पर्यावरण और स्वास्थ्य के लिए भी अनुकूल है। सही प्रजाति चयन, वैज्ञानिक खेती की तकनीकों का उपयोग, और प्रभावी विपणन रणनीतियों के साथ, स्टीविया की खेती से किसान उच्च आय प्राप्त कर सकते हैं। भारत में स्टीविया की मांग और इसके उत्पादों का बाजार लगातार बढ़ रहा है, जो इसे भविष्य की एक महत्वपूर्ण फसल बनाता है।

■■■

ISSN: 3049-2211

मशरूम की ताज़गी अब लंबे समय तक: संरक्षण की वैज्ञानिक और व्यावहारिक तकनीकें

डॉ. अनुराधा श्रीवास्तव– वरिष्ठ वैज्ञानिक
डॉ. बृज लाल अत्री– प्रधान वैज्ञानिक
डॉ. श्वेता बिजला डॉ. एवं अनारसे दत्तात्रय अर्जुन– वैज्ञानिक
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद– खुम्ब अनुसंधान निदेशालय, सोलन (हिमाचल प्रदेश)।

परिचय

कटाई के बाद मशरूम की गुणवत्ता कैसे बनाए रखें?

मशरूम की खेती देशभर में लोकप्रिय होती जा रही है, लेकिन इसकी सबसे बड़ी चुनौती है– कटाई के बाद जल्दी खराब हो जाना। अत्यधिक नमी और कोमलता के कारण यह उत्पाद बहुत जल्दी अपनी ताजगी खो देता है, जिससे किसान और विक्रेता दोनों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। ऐसे में मशरूम की गुणवत्ता और ताजगी बनाए रखने के लिए विभिन्न संरक्षण तकनीकों का उपयोग करना आवश्यक है। यह लेख इन्हीं तकनीकों पर विस्तार से प्रकाश डालता है।

कोल्ड स्टोरेजः ताजगी बनाए रखने का पहला कदम

कोल्ड स्टोरेज सबसे सरल और सुलभ तरीका है जिससे मशरूम को 5–7 दिनों तक ताजा रखा जा सकता है। यदि मशरूम को 0°६ से 2°C तापमान और 85–95 प्रतिशत आर्द्रता में संग्रहित किया जाए, तो उनकी जैविक गतिविधियाँ धीमी हो जाती हैं और जीवाणुओं या फफूंद का विकास रुकता है। परंतु यह भी आवश्यक है कि मशरूम को ऐसी सामग्री में पैक किया जाए जो सांस लेने योग्य हो, जैसे कि छिद्रयुक्त बैग। कटाई और पैकिंग के दौरान सावधानी जरूरी है क्योंकि चोटिल या खरोंच लगे मशरूम जल्दी खराब हो जाते हैं। यह विधि उन किसानों के लिए उपयुक्त है जो उत्पाद को एक सप्ताह के भीतर बाज़ार में बेचते हैं।

फ्रीजिंगः लंबी अवधि के लिए सुरक्षित रखाव

यदि मशरूम को लंबे समय के लिए संग्रहित करना हो जैसे निर्यात, प्रोसेसिंग या बड़े होटल–रेस्तरां के लिए तो डीप फ्रीजिंग एक उत्कृष्ट विकल्प है। इस प्रक्रिया में पहले मशरूम को अच्छी तरह साफ किया जाता है और फिर उन्हें उबालकर ब्लांच किया जाता है ताकि एंजाइम्स निष्क्रिय हो जाएँ। इसके बाद −18°C से −35°C तापमान पर उन्हें तेजी से जमाया जाता है और फिर −20°६ पर संग्रहित किया जाता है। IQF (Individually Quick Frozen) तकनीक के प्रयोग से मशरूम एक–दूसरे से नहीं चिपकते और आसानी से उपयोग में लाए जा सकते हैं। इस प्रक्रिया में उनके रंग, स्वाद और पोषण तत्व भी सुरक्षित रहते हैं और भंडारण अवधि 6–12 महीने तक हो सकती है।

ब्राइनिंग और स्टीपिंगः सीमित संसाधनों के बीच प्रभावी उपाय

जब किसान के पास कोल्ड स्टोरेज या फ्रीजिंग की सुविधा नहीं हो, लेकिन उत्पादन अधिक हो, तो ब्राइनिंग और स्टीपिंग जैसी पारंपरिक विधियाँ बेहद सहायक साबित होती हैं। ब्राइनिंग में मशरूम को 20 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोया जाता है जिसमें pH स्तर लगभग 3.5 होता है। यह तरीका 2–6 सप्ताह तक मशरूम को सुरक्षित रख सकता है। वहीं स्टीपिंग विधि में साइट्रिक एसिड, नमक, सोडियम बाइकार्बोनेट और पोटाशियम मेटाबाईसल्फाइट के मिश्रण का उपयोग किया जाता है, जिससे 8–10 दिनों तक ताजगी बरकरार रहती है। यह विधियाँ खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में तत्काल समाधान के रूप में कारगर हैं।

कैनिंगः सालों–साल सुरक्षित रखने वाली तकनीक

मशरूम को यदि साल भर से भी ज्यादा समय तक सुरक्षित रखना हो और वह भी बिना रेफ्रिजरेशन के, तो कैनिंग सबसे भरोसेमंद तकनीक है। इसमें मशरूम को पहले साइट्रिक एसिड मिले पानी में धोया जाता है और फिर 95–100°C तापमान पर नमक और साइट्रिक एसिड के घोल में 5द्6 मिनट के लिए ब्लांच किया जाता है। इसके बाद इन्हें गर्म ब्राइन के साथ टिन के डिब्बों में भरा जाता है और 118°C पर 10–15 चेप दबाव में जीवाणुरहित किया जाता है। इस पूरी प्रक्रिया के बाद डिब्बों को ठंडा कर लेबलिंग और पैकिंग की जाती है। यह तकनीक खासकर एक्सपोर्ट और ऑफ–सीजन मार्केटिंग के लिए उपयुक्त है।

सुखानाः पारंपरिक लेकिन आधुनिक उपयोग के लिए तैयार

सुखाना मशरूम संरक्षण की सबसे पुरानी विधियों में से एक है, लेकिन आज यह तकनीक भी स्मार्ट रूप में विकसित हो चुकी है। ताजे मशरूम में 85–90% तक नमी होती है, जिसे सुखाने के बाद 12% से कम पर लाया जाता है। इसके लिए कैबिनेट ड्रायर, सोलर ड्रायर या पारंपरिक धूप में सुखाने की विधि अपनाई जा सकती है। आधुनिक कैबिनेट ड्रायर में 45–50°C पर 18–20 घंटे में मशरूम अच्छी तरह सूख जाते हैं। सुखाने के बाद इन्हें वायुरोधक डिब्बों में ठंडी व सूखी जगह पर संग्रहित किया जाता है, जिससे इनकी भंडारण अवधि 6–12 महीने तक होती है। सुखाए गए मशरूम को पाउडर में बदलकर नूडल्स, सूप, मसाले या स्नैक्स जैसे उत्पादों में उपयोग किया जा सकता है।

MAP: मॉडिफाइड एटमॉस्फियर पैकेजिंग की आधुनिक ताकत

MAP यानी मॉडिफाइड एटमॉस्फियर पैकेजिंग एक अत्याधुनिक तकनीक है, जो मशरूम की सांस लेने की प्रक्रिया को नियंत्रित करके उसकी ताजगी को लंबे समय तक बनाए रखती है। इस तकनीक में पैक के अंदर ऑक्सीजन को 5.0–10.0% और

कार्बन डाइऑक्साइड को 2.5–5.0% के बीच बनाए रखा जाता है। "एंटी–फॉग" कोटिंग वाली विशेष फिल्म के कारण मशरूम की सतह पर नमी जमा नहीं होती और उत्पाद 15–24 दिन तक ताजगी के साथ बिक सकता है। यह विधि सुपरमार्केट, रिटेल चेन और पैकेज्ड फूड ब्रांड्स के लिए बहुत उपयुक्त है।

सारणी 1: कौन सी तकनीक कब उपयोग करें?

संरक्षण विधि	शेल्फ लाइफ	उपयोग की स्थिति
कोल्ड स्टोरेज	5–7 दिन	स्थानीय बाज़ार, त्वरित बिक्री
डीप फ्रीजिंग	6–12 महीने	होटल, प्रोसेसिंग, निर्यात
ब्राइनिंग / स्टीपिंग	8–10 दिन	अधिक उत्पादन, सीमित संसाधन
कैनिंग	1–3 वर्ष	एक्सपोर्ट, ऑफ–सीजन बिक्री
सुखाना	6–12 महीने	पाउडर, रेडी मिक्स, ऑनलाइन सेल
MAP पैकेजिंग	15–24 दिन	सुपरमार्केट, रिटेल चेन

निष्कर्ष

सही संरक्षण तकनीक से बढ़ेगा मुनाफा और गुणवत्ता

मशरूम की खेती की सफलता केवल अच्छी पैदावार तक सीमित नहीं है, बल्कि फसल कटाई के बाद उसकी गुणवत्ता और ताजगी को बनाए रखना भी उतना ही आवश्यक है। इसके लिए कोल्ड स्टोरेज से लेकर MAP तक कई तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है। हर किसान या उद्यमी को अपनी जरूरत, बाजार, संसाधनों और लागत को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त तकनीक का चयन करना चाहिए। इससे न केवल मशरूम की बर्बादी रुकेगी, बल्कि किसान की आय बढ़ेगी और भारतीय मशरूम की वैश्विक स्तर पर विश्वसनीयता भी मजबूत होगी।

■■■

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

भारत में डिजिटल फार्मिंग की भूमिका और महत्व

इंजी. अमित गुप्ता, डॉ. दिलीप कुमार कुशवाहा एवं डॉ. पी. के. साहू
कृषि अभियांत्रिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

हमारा भारत वर्ष एक कृषि प्रधान देश है जहाँ पर अधिकांश जनसंख्या की आजीविका खेती पर निर्भर है। कृषि न केवल देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, बल्कि यह खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण जीवन और रोजगार सृजन का भी मुख्य स्रोत है। परंतु बदलते समय के साथ भारतीय कृषि को अनेक प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। जलवायु परिवर्तन, अनियमित वर्षा, मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावट, बढ़ती उत्पादन लागत, कीट प्रकोप, बाजार की अनिश्चितता और पारंपरिक कृषि विधियाँ इन समस्याओं को और गंभीर बना रही हैं। अतः खेती को किसानों के लिए लाभकारी और आर्थिक रूप से सशक्त बनाने पर ज़ोर देने की आवश्यकता है। परिणामस्वरूप, किसान आर्थिक रूप से कमजोर हो रहे हैं और खेती एक अलाभकारी व्यवसाय बनती जा रही है।

ऐसे समय में डिजिटल फार्मिंग एक नई आशा और समाधान के रूप में सामने आई है। यह तकनीक आधारित आधुनिक दृष्टिकोण है, जिसमें सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, स्मार्ट सेंसर, जीपीएस, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, ड्रोन, और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) जैसी उन्नत तकनीकों का समावेश होता है। डिजिटल फार्मिंग का उद्देश्य खेती को अधिक सटीक, लाभदायक, पर्यावरण–अनुकूल और संसाधनों के उपयोग में दक्ष बनाना है। यह प्रणाली किसानों को वास्तविक समय में खेत की स्थिति, मौसम पूर्वानुमान, मिट्टी की नमी, कीट नियंत्रण और बाजार की जानकारी प्रदान करती है, जिससे वे समय पर सही निर्णय ले सकें।

इस आधुनिक प्रणाली के माध्यम से उत्पादन की मात्रा और गुणवत्ता दोनों में वृद्धि संभव होती है। साथ ही, संसाधनों जैसे पानी, उर्वरक और कीटनाशकों का सीमित एवं सटीक उपयोग होता है, जिससे लागत में कमी आती है और पर्यावरणीय प्रभाव भी घटता है। डिजिटल फार्मिंग न केवल तकनीकी प्रगति का प्रतीक है, बल्कि यह किसानों को आत्मनिर्भर और सशक्त बनाने का माध्यम

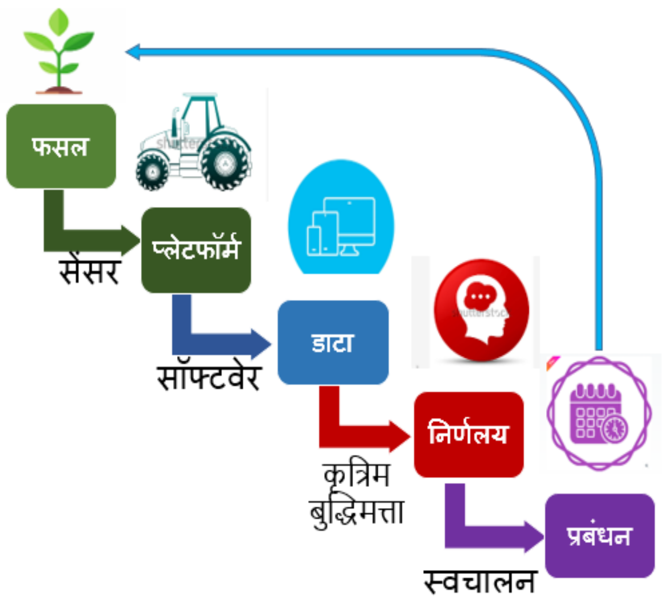

भी है। इसलिए आज जब भारत डिजिटल इंडिया की ओर अग्रसर है, तो कृषि क्षेत्र में डिजिटल फार्मिंग को अपनाना समय की आवश्यकता बन गई है।

डिजिटल फार्मिंग का अर्थ

डिजिटल फार्मिंग, जिसे 'साइबर कृषि' भी कहा जाता है, कृषि की एक ऐसी विधा है जिसमें आधुनिक डिजिटल तकनीकों का उपयोग करके खेती के प्रत्येक पहलू को नियंत्रित, निगरानी और अनुकूलित किया जाता है। इसमें शामिल हैं–

- डेटा–संचालित निर्णय लेना
- सेंसर व डिवाइस का उपयोग
- उन्नत विश्लेषणात्मक मॉडल
- तत्काल निगरानी और पूर्वानुमान

यह कृषि को पारंपरिक से आधुनिक बनाने की प्रक्रिया है, जो किसानों को अधिक उत्पादक, कुशल और पर्यावरण–संवेदनशील बनाती है।

डिजिटल खेती के घटक

डिजिटल खेती कई उन्नत तकनीकी घटकों के संयोजन पर आधारित होती है, जो मिलकर कृषि को अधिक सटीक, स्मार्ट और लाभकारी बनाते हैं। इसके प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं–

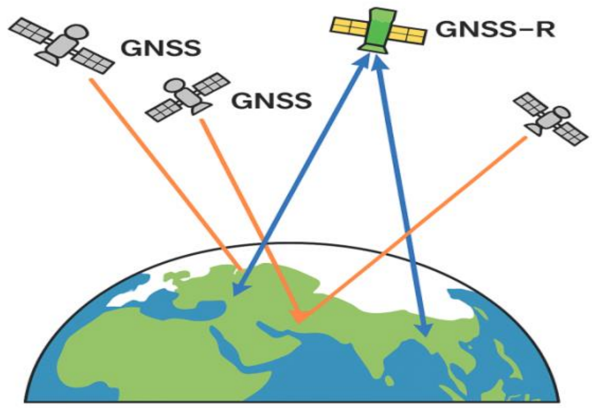

रिमोट सेंसिंग (Remote Sensing)–

यह उपग्रहों या ड्रोन के माध्यम से खेतों की स्थिति, मिट्टी की नमी, पौधों की सेहत और फसल की वृद्धि पर नजर रखने की तकनीक है। इससे किसान समय रहते आवश्यक निर्णय ले सकते हैं।

जीपीएस (Global Positioning System & GPS)–

यह तकनीक खेत की सटीक लोकेशन बताने में मदद करती है। जीपीएस आधारित यंत्र जैसे ट्रैक्टर या ड्रोन, खेत में तय स्थानों पर कार्य कर सकते हैं, जिससे संसाधनों का कुशल उपयोग होता है।

जीआईएस (Geographic Information System & GIS)–

यह एक डिजिटल नक्शा प्रणाली है जो खेत के भौगोलिक डेटा (जैसे मृदा प्रकार, वर्षा, ऊँचाई) का विश्लेषण कर खेती के निर्णयों को बेहतर बनाती है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence & AI)–

कृत्रिम बुद्धिमता आधारित मॉडल खेत के आंकड़ों का विश्लेषण करके भविष्यवाणी करता है जैसे कृ फसल की पैदावार, कीट प्रकोप, या सिंचाई की जरूरत। यह निर्णय लेने में तेजी और सटीकता प्रदान करता है।

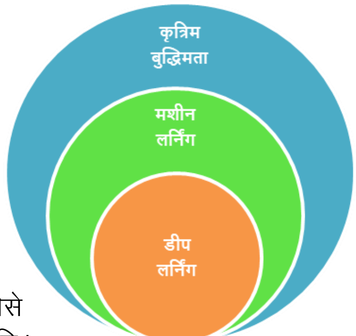

इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT)–

इस तकनीकी आधारित डिवाइसों जैसे स्मार्ट सेंसर, मौसम स्टेशन और स्वचालित पंप खेतों से लगातार डेटा एकत्र करते हैं और एक–दूसरे से जुड़कर स्वचालित निर्णय लेते हैं, जैसे सिंचाई चालू या बंद करना आदि।

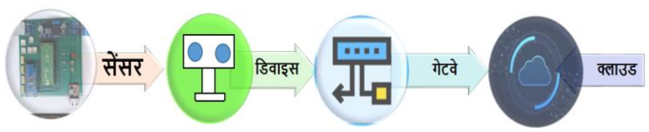

क्यू आर कोड तकनीकी (QR Code)

क्यू आर कोड आधारित क्लाउड से जुड़ने की लिंक इंटरनेट आफ थिंग को और भी आसान बना रही हैं। जिससे किसान आसानी से स्कैन करके जुड़ पाते हैं और सूचना और नियंत्रण प्राप्त कर पाते हैं।

बिग डेटा एनालिटिक्स (Big Data Analytics)–

लाखों डेटा पॉइंट्स जैसे मौसम, मिट्टी, बीज, बाजार कीमत आदि का विश्लेषण करके किसान को उपयुक्त सलाह देना। इससे खेती अधिक वैज्ञानिक और अनुकूल बनती है। और कृत्रिम बुद्धिमता इसमें प्रमुख भूमिका निभा रही है।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT – Information and Communication Technology)–

मोबाइल ऐप, वेब पोर्टल, कॉल सेंटर और ेडै सेवाएँ सूचना एव संचार प्रधोगिकी के माध्यम हैं, जिनके ज़रिए किसान खेती से संबंधित जानकारी, मौसम की भविष्यवाणी, सरकारी योजनाएँ और बाज़ार मूल्य जैसे महत्वपूर्ण डेटा तकपहुँच पाते हैं।

डिजिटल फार्मिंग के प्रमुख लक्ष्य

1. उत्पादकता में वृद्धि: खेत के प्रत्येक वर्ग मीटर से अधिक उपज प्राप्त करना।

2. लागत में कमी: श्रम, उर्वरक, बीज, और पानी की खपत को कम करना।

3. गुणवत्ता में सुधार: फसल की गुणवत्ता बेहतर करना ताकि अधिक मूल्य प्राप्त हो सके।

4. पर्यावरण संरक्षण: रसायनों के अनियंत्रित प्रयोग को रोकना और जलवायु के अनुकूल खेती को बढ़ावा देना।

5. कृषि प्रबंधन को सशक्त बनाना: आंकड़ों के आधार पर त्वरित और सटीक निर्णय लेना।

भारत में डिजिटल फार्मिंग की प्रगति

भारत में डिजिटल फार्मिंग की यात्रा धीमी लेकिन स्थिर गति से आगे बढ़ रही है। कुछ प्रमुख पहलें हैं–

- **ई–नाम (e-NAM):** एकीकृत कृषि बाजार प्लेटफॉर्म।
- **किसान कॉल सेंटर:** तकनीकी सलाह के लिए।
- **डिजिटल कृषि मिशन 2021–2025:** AI, IoT, ब्लॉकचेन आदि को बढ़ावा देने हेतु।

चुनौतियाँ

- **डिजिटल डिवाइड:** ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट और स्मार्टफोन की कमी।
- **शिक्षा का अभाव:** किसानों को तकनीकी ज्ञान की कमी।
- **उच्च लागत:** छोटे किसानों के लिए उन्नत उपकरणों की कीमत।
- सफल उदाहरण

महाराष्ट्र का स्मार्ट सिंचाई प्रोजेक्ट

महाराष्ट्र में जल संकट की चुनौती को देखते हुए राज्य सरकार ने एक अभिनव परियोजना के रूप में "स्मार्ट इरिगेशन प्रोजेक्ट" शुरू किया, जिसमें इंटरनेट आफ थिंग आधारित स्मार्ट सेंसर तकनीक का उपयोग किया गया। इस परियोजना के तहत खेतों में सेंसर लगाए गए जो मिट्टी की नमी, तापमान और मौसम की स्थिति को निरंतर मापते हैं। इन आंकड़ों के आधार पर सिंचाई स्वचालित रूप से नियंत्रित होती है और फसलों को केवल आवश्यकतानुसार ही पानी दिया जाता है। इस तकनीक से पारंपरिक सिंचाई की तुलना में लगभग 30% पानी की बचत दर्ज की गई। इसके साथ ही बिजली और श्रम की भी बचत हुई, क्योंकि सिंचाई मोटर को कम समय तक चलाना पड़ा। इस प्रणाली ने किसानों को स्मार्टफोन या कंप्यूटर के माध्यम से अपने खेत की सिंचाई को नियंत्रित करने की सुविधा दी, जिससे न केवल समय की बचत हुई बल्कि जल संसाधनों के संरक्षण में भी मदद मिली। किसानों ने इस तकनीक को उपयोगी बताते हुए कहा कि इससे उनकी फसल की गुणवत्ता में सुधार आया है और उत्पादन में भी बढ़ोत्तरी हुई है।

तमिलनाडु में ड्रोन का उपयोग: धान के खेतों में कीटनाशक छिड़काव

तमिलनाडु में ड्रोन तकनीक का प्रयोग धान की फसलों में कीटनाशकों के छिड़काव के लिए किया गया, जिससे खेती के काम में क्रांतिकारी परिवर्तन देखा गया। तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय और राज्य सरकार के सहयोग से यह परियोजना चलाई गई जिसमें किसान अपने खेतों में ड्रोन से सटीक और तेज़ गति से कीटनाशक छिड़काव कर सके। पारंपरिक पद्धति में यह कार्य हाथ से स्प्रे मशीन के माध्यम से किया जाता था, जिससे न केवल समय लगता था, बल्कि किसान रसायनों के सीधे संपर्क में भी आते थे। ड्रोन तकनीक ने इस प्रक्रिया को न केवल 50% तेज़ बना दिया, बल्कि 25–30% तक कीटनाशकों की बचत भी सुनिश्चित की। GPS से नियंत्रित ड्रोन पूर्व निर्धारित उड़ान पथ के अनुसार खेतों में समान रूप से छिड़काव करते हैं, जिससे प्रत्येक पौधे तक रसायन पहुँचता है और नुकसान नहीं होता। किसानों का कहना है कि अब उन्हें ज़्यादा मेहनत नहीं करनी पड़ती और छिड़काव भी बहुत

ISSN: 3049-2211

सटीकता से होता है। इस तकनीक ने खेती को अधिक सुरक्षित, वैज्ञानिक और समय की दृष्टि से लाभदायक बना दिया है।

पूसा एरिया मीटर का उपयोग

यह क्षेत्र मापी एक सटीक और उपयोगकर्ता–अनुकूल यंत्र है, जिसे खेतों में भूमि के क्षेत्रफल को मापने के लिए विकसित किया गया है। इसका कुल आकार लगभग 10 सेमी लंबा, 4–6 सेमी चौड़ा और 12.8 सेमी ऊँचा होता है, तथा यह जलरोधक प्लास्टिक या धातु के आवरण से सुरक्षित होता है। इसके आधार में एक माइल्ड स्टील स्टैंड होता है और एक स्प्रॉकेट से जुड़ा हुआ बेयरिंग–सहायित शाफ्ट (0.75 सेमी व्यास, 16 सेमी लंबा) लगी होती है, जो घूर्णन से दूरी मापता है। यह यंत्र 12 वोल्ट इनपुट पर कार्य करता है, जिसे दो लिथियम बैटरियों (3.7 वोल्ट, 1200mAh) द्वारा पावर सप्लाई दी जाती है, तथा एक बक कन्वर्टर के माध्यम से 12 वोल्ट को 5ट में परिवर्तित किया जाता है। इसका मुख्य ढांचा मजबूत और जलरोधक प्लास्टिक या धातु से बना होता है।

इसमें ESP–32 माइक्रोकंट्रोलर (Wi-Fi सहित), OLED डिस्प्ले, Atmega328 और हॉल इफेक्ट सेंसर्स जैसे घटक लगे होते हैं, जो घूर्णन गति से दूरी का हिसाब लगाते हैं।

यह यंत्र क्षेत्र क्षमता (कितना क्षेत्र एक निर्धारित समय में कवर किया गया) और क्षेत्र दक्षता (यंत्र की कार्यकुशलता) की गणना भी करता है। इसके अतिरिक्त, यह वास्तविक समय में इनपुट डेटा के आधार पर संचालन की लागत का अनुमान लगाता है और परिणामों को स्थानीय माप इकाइयों (जैसे गंठा, बीघा, कट्ठा) और किसान की पसंदीदा भाषा में प्रदर्शित करता है। इसका उपयोगकर्ता–मित्रवत डिज़ाइन यंत्र को आसानी से संचालित करने में मदद करता है, जिससे किसानों के बीच इसके व्यापक स्वीकृति और अपनत्व की संभावना बढ़ जाती है।

किसानों के लिए डिजिटल खेती क्यों लाभकारी है?

कम जोखिमः समय पर चेतावनी और पूर्वानुमान से नुकसान की आशंका कम होती है।

अधिक लाभः फसल की गुणवत्ता, विपणन सुविधा, और लागत में कटौती से आय बढ़ती है।

ज्ञान आधारित खेतीः भावनाओं नहीं, आँकड़ों के आधार पर निर्णय लिए जाते हैं।

सरकारी योजनाओं से जोड़ावः डिजिटल पहचान से लाभ सीधे खाते में पहुँचते हैं।

निष्कर्ष

डिजिटल फार्मिंग भारतीय कृषि को अधिक उत्पादक, टिकाऊ और लाभदायक बना सकती है। हालाँकि, इसके सफल कार्यान्वयन के लिए सरकार, निजी क्षेत्र और किसानों को मिलकर काम करना होगा। तकनीकी शिक्षा, सस्ते उपकरण और इंटरनेट की पहुँच सुनिश्चित करके हम ष्डिजिटल इंडियाष के सपने को साकार कर सकते हैं।

ISSN: 3049-2211

खरीफ फसलों के लिए केन्द्रीय और बिहार सरकार की नीतियां और सब्सिडी

शुभ लक्ष्मी– सहायक प्रोफेसर–सह–कनीय वैज्ञानिक, कृषि अर्थशास्त्र
आशीष चौरसिया– सहायक प्रोफेसर–सह–कनीय वैज्ञानिक कृषि विज्ञान विभाग
भोला पासवान शास्त्री कृषि महाविद्यालय, पूर्णिया, बिहार कृषि विश्वविद्यालय सबौर।

परिचय

कृषि में सरकारी सहायता का महत्व

कृषि एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है जो दुनिया की आबादी को भोजन उपलब्ध कराता है अर्थव्यवस्थाओं को सहारा देता है और ग्रामीण समुदायों को बनाए रखता है। हालाँकि इसकी सफलता केवल मिट्टी की गुणवत्ता मौसम की स्थिति या किसान प्रथाओं पर निर्भर नहीं करती है यह सरकारी नीतियों से भी काफी प्रभावित होती है। ये नीतियां विभिन्न रूप ले सकती हैं जिनमें प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता से लेकर पर्यावरण विनियमन व्यापार समझौते अनुसंधान वित्तपोषण और भूमि उपयोग नीतियां शामिल हैं। किसानों की आर्थिक सामाजिक और पर्यावरणीय परिस्थितियों को आकार देकर सरकारी नीतियां कृषि पद्धतियों की दिशा और स्थिरता को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

खरीफ फसलों के लिए केंद्र और बिहार सरकार की नीतियां और सब्सिडी

1 केंद्र सरकार की नीतियां और सब्सिडी

ए. न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी)

सरकार की मूल्य समर्थन नीति का उद्देश्य कृषि उत्पादकों को कृषि मूल्यों में किसी भी तीव्र गिरावट के विरुद्ध बीमा प्रदान करना है। न्यूनतम गारंटीकृत मूल्य एक ऐसी सीमा निर्धारित करने के लिए तय किए जाते हैं जिसके नीचे बाजार मूल्य नहीं गिर सकते।

तालिका–1 विपणन सीजन 2024–25 के लिए कुछ चयनित खरीफ फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य

फसलें	एमएसपी (2024–25) (रु./क्विंटल)	एमएसपी (2023–24) (रु./क्विंटल)	2023–24 की तुलना में 2024–25 में एमएसपी में वृद्धि (रु./क्विंटल)
धान	2300	2183	117
मक्का	2225	2090	135
तुअर/अरहर	7550	7000	550
मूंग	8682	8558	124
उड़द	7400	6950	450
मूंगफली	6783	6377	406
ज्वार	3371	3180	191
बजारा	2625	2500	125

स्रोतः आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय कृषि सहयोग एवं किसान कल्याण विभाग कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय

बी. प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफबीवाई)

18 फरवरी 2016 को शुरू की गई प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना कृषि मंत्रालय के कृषि सहकारिता एवं किसान कल्याण विभाग द्वारा शुरू की गई एक फसल बीमा योजना है। पीएमएफबीवाई का उद्देश्य प्राकृतिक आपदाओं (ओलावृष्टि सूखा अकाल) कीटों और बीमारियों के कारण फसल के नुकसान के खिलाफ किसानों को वित्तीय सुरक्षा प्रदान करना है। पीएमएफबीवाई एक किफायती फसल बीमा उत्पाद है जिसे बीमा कंपनियों और बैंकों के नेटवर्क के माध्यम से लागू किया जाता है।

सी. प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि (पीएम–किसान) किसानों के लिए प्रत्यक्ष आय सहायता योजना

इस योजना का उद्देश्य सभी भूमिधारक किसान परिवारों की वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करना है ताकि उचित फसल स्वास्थ्य और उपयुक्त पैदावार सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न इनपुट खरीदे जा सकें। इस योजना के अंतर्गत कुछ अपवादों को छोड़कर केन्द्र सरकार द्वारा प्रत्यक्ष लाभ अंतरण मोड के अंतर्गत पात्र किसानों के बैंक खातों में सीधे ऑनलाइन माध्यम से प्रति वर्ष 6000 रुपए की राशि जारी की जाती है।

डी. बीज और उर्वरकों पर सब्सिडीः

उच्च गुणवत्ता वाले बीजों और कम इनपुट लागत के लिए सहायता सरकार द्वारा किसानों को सब्सिडी प्रदान करने वाले कुछ घटक/योजनाएँ इस प्रकार हैं

बीज

कृषि विभाग फसलों के गुणवत्तायुक्त बीजों के उत्पादन एवं गुणन को बढ़ावा देने के लिए वर्ष 2014–15 से बीज एवं रोपण सामग्री (एसएमएसपी) पर उप–मिशन क्रियान्वित कर रहा है ताकि देश में किसानों को आवश्यक मात्रा में बीज उपलब्ध कराया जा सके। किसानों द्वारा संरक्षित बीजों की गुणवत्ता को उन्नत करने के लिए गुणवत्तायुक्त बीजों के उत्पादन के लिए अनाज फसलों के लिए बीजों की लागत का 50 प्रतिशत तथा दलहन तिलहन चारा और हरी खाद फसलों के लिए 60 प्रतिशत मूल्य पर आधार/प्रमाणित बीजों के वितरण हेतु वित्तीय सहायता एसएमएसपी के बीज ग्राम कार्यक्रम घटक के अंतर्गत प्रति किसान एक एकड़ के लिए उपलब्ध/प्रदान की जाती है।

मशीनीकरण एवं प्रौद्योगिकी

कृषि मशीनीकरण पर उप मिशन (एसएमएएम)

2014–15 से लागू किया जा रहा है। एसएमएएम, छोटे और सीमांत किसानों पर विशेष ध्यान देते हुए कार्यान्वयन के लिए 'एकल खिड़की' दृष्टिकोण प्रदान करके कृषि मशीनीकरण के

समावेशी विकास के लिए सभी गतिविधियों को एकीकृत करने के लिए एक उपयुक्त मंच प्रदान करता है ।

प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पीएमकेएसवाई) के तीन घटक हैं–

- ✓ पीएमकेएसवाई (हर खेत को पानी),
- ✓ पीएमकेएसवाई (वाटरशेड)
- ✓ पीएमकेएसवाई (प्रति बूंद अधिक फसल)

गोदाम

कृषि उपज प्रसंस्कृत कृषि उपज और कृषि इनपुट आदि के भंडारण के लिए वैज्ञानिक भंडारण क्षमता के निर्माण को बढ़ावा देने कटाई के बाद और हैंडलिंग के नुकसान को कम करने प्रतिज्ञा वित्तपोषण को बढ़ावा देने और विपणन बुनियादी ढांचे (भंडारण के अलावा) सहित बाजार पहुंच को बढ़ावा देने के लिए।

उर्वरक

किसानों को यूरिया वैधानिक रूप से अधिसूचित अधिकतम खुदरा मूल्य (एमआरपी) पर उपलब्ध कराया जा रहा है। यूरिया के 45 किलोग्राम के बैग का एमआरपी 242 रुपये प्रति बैग है (नीम कोटिंग के लिए शुल्क और लागू करों को छोड़कर) और यूरिया के 50 किलोग्राम के बैग का एमआरपी 268 रुपये प्रति बैग है (नीम कोटिंग के लिए शुल्क और लागू करों को छोड़कर)

2. बिहार सरकार की नीतियां और सब्सिडी

ए. बिहार राज्य फसल सहायता योजना (बीआरएफएसवाई)

बिहार राज्य फसल सहायता योजना बिहार सरकार द्वारा बिहार में खेती करने वाले किसानों की फसलों को प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़ सूखा आदि से बचाने के लिए शुरू की गई है। इस बिहार राज्य फसल सहायता योजना के अंतर्गत यदि किसी प्राकृतिक आपदा के कारण किसानों की खेती को कोई नुकसान होता है तो उन्हें बिहार सरकार द्वारा बिहार राज्य फसल सहायता योजना के अंतर्गत आर्थिक सहायता प्रदान की जाएगी। बीआरएफएसवाई एक फसल सहायता योजना है, जो बीमा के बजाय वित्तीय सहायता पर केंद्रित है।

बी. कृषि मशीनरी पर सब्सिडीः आधुनिक उपकरण खरीदने के लिए वित्तीय सहायता

बिहार सरकार किसानों को अपनी कृषि पद्धतियों को आधुनिक बनाने में मदद करने के लिए कृषि मशीनरी सब्सिडी योजना चलाती है जिसमें उपकरणों पर 80 प्रतिशत तक की सब्सिडी दी जाती है। इस योजना का उद्देश्य उत्पादकता बढ़ाना श्रम लागत कम करना और टिकाऊ खेती को बढ़ावा देना है।

सी. जैविक खेती को बढ़ावा

जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए 2008–09 से आरकेवीवाई के तहत 80.93 करोड़ रुपये की राशि प्रदान की गई है। इसके बाद, 2011–12 में बायो गैस प्लांट इकाइयों को भी आरकेवीवाई में शामिल किया गया। 3000 मीट्रिक टन/वर्ष उत्पादन क्षमता वाली वाणिज्यिक वर्मी–कम्पोस्ट इकाइयों को अधिकतम 25 लाख रुपये (लागत का 50 प्रतिशत) की सब्सिडी पर स्थापित करने की मंजूरी दी गई। राज्य भर में 5 करोड़ रुपये की कुल लागत से ऐसी 20 इकाइयां स्थापित की जा रही हैं।

डी. बिजली और सिंचाई सब्सिडी

बिहार सरकार ने नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को बढ़ावा देने के लिए बिहार नीति 2011 जारी की थी। बिहार सरकार ने विभिन्न विद्युतीकरण योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों तक बिजली पहुंचाने और उपलब्ध कराने में निरंतर प्रगति की है। वित्त वर्ष 2018–19 तक सभी को विश्वसनीय 24×7 बिजली उपलब्ध कराने के महत्वाकांक्षी लक्ष्य को पूरा करने के लिए मिनी ग्रिड जैसे विकेन्द्रीकृत समाधान बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

ई. सहकारी समर्थन और खरीद पहल

बिहार के कृषि क्षेत्र को उल्लेखनीय बढ़ावा देते हुए राज्य सरकार ने वित्तीय वर्ष 2024–25 के लिए लक्षित 45 लाख मीट्रिक टन धान का 87 प्रतिशत सफलतापूर्वक खरीद लिया है। प्राथमिक कृषि ऋण समितियों (पीएसीएस) के माध्यम से 39.23 लाख मीट्रिक टन धान खरीदा गया है, जिसका भुगतान किसानों को बिक्री के 48 घंटे के भीतर किया गया है। यह त्वरित भुगतान प्रणाली किसानों के लिए एक बड़ा परिवर्तनकारी कदम साबित हुई है, क्योंकि इससे वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित हुई है और सरकारी खरीद कार्यक्रमों में भागीदारी को प्रोत्साहन मिला है।

■■■

ISSN: 3049-2211

वायरस जनित रोगों से सब्जियों की सुरक्षा

डॉ. एस.जी. घुगल– कीटशास्त्र विभाग
डॉ. साक्षी सिंह– सहायक प्राध्यापक, पौधरोग विज्ञान विभाग
जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, पवारखेड़ा, नर्मदापुरम, मध्य प्रदेश।

वायरस जनित रोग सब्जियों की उत्पादकता को गंभीर रूप से प्रभावित करते हैं। ये रोग सीधे तौर पर पौधे के आंतरिक जैविक तंत्र को नुकसान पहुंचाते हैं और कीटों द्वारा तेजी से फैलते हैं। इनसे सुरक्षा के लिए स्वस्थ बीज का चयन, वाहक कीटों का नियंत्रण, रोगग्रस्त पौधों की समय पर पहचान तथा जैविक और पारंपरिक उपायों का संतुलित प्रयोग अत्यंत आवश्यक है।

प्रस्तावना

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में सब्जियां न केवल पोषण का प्रमुख स्रोत हैं, बल्कि लाखों किसानों की आजीविका का भी आधार हैं। किन्तु इन फसलों को वायरसजनित रोगों से अत्यधिक हानि होती है, जो उपज में भारी गिरावट तथा गुणवत्ता में कमी का कारण बनते हैं। वायरसजनित रोगों का कोई सीधा रासायनिक उपचार उपलब्ध नहीं है, अतः इनसे सुरक्षा हेतु रोकथाम एवं जैविक नियंत्रण पर आधारित समेकित उपायों की आवश्यकता है।

वायरस जनित रोग क्या होते हैं?

वायरस जनित रोग वे रोग होते हैं जो पौधों में विशेष प्रकार के विषाणुओं के संक्रमण से उत्पन्न होते हैं। ये वायरस पौधों की कोशिकाओं में प्रवेश कर उनके कार्य को बाधित करते हैं, जिससे पत्तियों में विकृति, पीताभता, मोजेक, पर्ण झुलसन, विकृत फूल या फल जैसे लक्षण प्रकट होते हैं। यह रोग अक्सर कीट वाहकों जैसे सफेद मक्खी, थ्रिप्स, एफिड इत्यादि द्वारा फैलते हैं।

मुख्य वायरसजनित रोग (उदाहरण सहित)–

फसल	रोग का नाम	प्रमुख लक्षण	वाहक कीट
टमाटर	टोमैटो येलो लीफ कर्ल वायरस	पत्तियों का मुड़ना, पीला पड़ना	सफेद मक्खी
मिर्च	चिली लीफ कर्ल वायरस	झुर्रियां, पत्तियों का मुड़ना	एफिड, सफेद मक्खी
भिंडी	येलो मोजेक वायरस	पीले चकत्ते, धीमी वृद्धि	सफेद मक्खी
लौकी	मोजेक	पत्तियों पर पीले धब्बे	थ्रिप्स, एफिड

वायरस जनित रोगों से सुरक्षा के उपाय

1. बीजोपचार एवं स्वस्थ पौध सामग्री का चयन

- ✓ केवल प्रमाणित, रोगमुक्त बीजों का उपयोग करें।
- ✓ रोगमुक्त नर्सरी से पौधें तैयार करें।

2. कीट वाहकों का नियंत्रण

- ✓ नीम आधारित कीटनाशकों (जैसे नीम तेल, अजाडीरेक्टिन) का छिड़काव।
- ✓ पीली और नीली चिपचिपी ट्रैप लगाएं।
- ✓ कीट–रोधी जाल या नेटहाउस का उपयोग करें।

3. फसल चक्र

- ✓ वायरस–प्रभावित फसल के बाद उसी प्रजाति की फसल न लगाएं।
- ✓ दलहनी या अनाज वर्ग की फसलें लें।

4. रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन

- ✓ टमाटर– अर्काविकास, अर्कारक्षक
- ✓ मिर्च– पीएनएचआर–1, अर्कामृदुला

5. संक्रमित पौधों का नष्ट करना

- ✓ रोगग्रस्त पौधों को तुरंत खेत से उखाड़कर गड्ढे में गाड़ें या जलाएं।
- ✓ खेत की स्वच्छता बनाए रखें।

6. नैदानिक निगरानी और पूर्वानुमान

- ✓ कीटों की संख्या पर नियमित निगरानी रखें।
- ✓ कृषि मौसम पूर्वानुमान केंद्रों की सलाह का पालन करें।

7. जैविक उपायों का प्रयोग

- ✓ *ट्राइकोडर्मा*, बीटी जैव कीटनाशी, *वर्टिसिलियम लेकानी, ब्यूवेरिया बेसियाना* जैसे जैव नियंत्रण एजेंट का प्रयोग करें।
- ✓ गौमूत्र व नीम अर्क जैसे देसी नुस्खों से छिड़काव।

सरकार द्वारा संचालित कार्यक्रम एवं सहायता

- ✓ राष्ट्रीय बागवानी मिशन
- ✓ एकीकृत कीट प्रबंधन मिशन
- ✓ कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा रोग पहचान प्रशिक्षण

निष्कर्ष

वायरस जनित रोगों से सब्जियों की रक्षा केवल उपचार नहीं बल्कि सतत एवं समेकित प्रबंधन की मांग करती है। रासायनिक नियंत्रण की सीमाओं और पर्यावरणीय खतरों को देखते हुए किसान समुदाय को जैविक एवं सांस्कृतिक उपायों को अपनाकर, वायरस वाहक कीटों पर नियंत्रण एवं रोगमुक्त पौध सामग्री के उपयोग की दिशा में आगे बढ़ना चाहिए। इस प्रकार की सतर्कता न केवल उत्पादन बढ़ाएगी, बल्कि सुरक्षित एवं टिकाऊ कृषि की ओर भी महत्वपूर्ण कदम होगा।

■■■

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

फार्म–टू–कंज़्यूमर मार्केटिंग: किसानों के लिए एक नई दिशा

रिशिता कपूर– शोध छात्रा
डॉ0 वेदना कुमारी– प्रधान वैज्ञानिक
आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, चौधरी सरवन कुमार हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर (हिमाचल प्रदेश)।
नवल किशोर– छात्र –एम बी ए; व्यापार प्रबंधन विभाग; हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय, (उत्तराखंड)।

भारतीय किसान अब तेजी से फार्म–टू–कंज़्यूमर (D2C) डायरेक्ट मार्केटिंग मॉडल अपना रहे हैं, जिसमें मंडी और एक से अधिक मध्यस्थ को हटाकर वे अपनी उपज सीधे उपभोक्ताओं, रिटेलर्स या संस्थागत खरीदारों को बेचते हैं, जिससे उनकी आय में 15–35% तक की वृद्धि संभव हो रही है। केन्द्र सरकार ने जनवरी 2025 में इस दिशा में सक्रिय रूप से समर्थन जताया, जब कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने बताया कि केंद्र सरकार ऐसा मॉडल लागू करने की दिशा में काम कर रही है ताकि किसान को बेहतर मुनाफा मिले और मध्यस्थ घटायें जायें। इस पहल को तकनीक आधारित स्टार्टअप्स जैसे Ninjacart, Crofarm, WayCool, Otipy, Book My Crop और Farmers Fresh Zone द्वारा समर्थन मिला है, जो किसान से सीधे ताज़ा फसल उठाकर शहरों में उपभोक्ताओं तक पहुंचाते हैं, जिससे आपूर्ति चेन में दक्षता, फ्रेशनेस और लागत–कटौती सुनिश्चित होती है तथा किसान मंडी के मुकाबले 20–30% अधिक मूल्य प्राप्त करते हैं। वहीं e NAM जैसे डिजिटल सरकारी मंच ने R real time भाव जानकारी, इंटर–स्टेट ट्रेड, डिजिटल पेमेंट और गुणवत्ता मानकीकरण के माध्यम से बाजार में पारदर्शिता लाने का काम किया है। ITC की e Choupal सेवा 35,000 गाँवों और 4 मिलियन से अधिक किसानों को इंटरनेट द्वारा मंडी भाव, खेती की जानकारी और खरीदी–बिक्री सुविधा प्रदान कर रही है, जिससे किसान सक्षम बन रहे हैं।

एग्रीटेक और प्रेसिजन खेती तकनीकें जैसे AI/IoT से लैस सेंसर, ड्रोन, GIS ट्रैकिंग, सैटेलाइट–सावित डेटा, मशीन लर्निंग, ब्लॉकचेन आदि से किसान मिट्टी, मौसम, जलवायु और बाजार का विश्लेषण कर निर्णय लेते हैं जिससे उत्पादन लागत घटती है, बर्बादी कम होती है और उपज में सुधार आता है । इस दिशा में केंद्रीय बजट 2025–26 ने डिजिटल कृषि मिशन, एफ0पी0ओ0 सशक्तिकरण, ब्लॉकचेन ट्रेसबिलिटी, मोबाइल आधारित ई मार्केटिंगेशन, खेती से जुड़े डेटा प्लेटफार्म्स जैसे प्रावधानों को शामिल किया है।

राज्य स्तर पर तमिलनाडु का Uzhavar Santhai मॉडल और उत्तर प्रदेश का PPP परियोजना Ninjacart के साथ, जहाँ प्रतिवर्ष 25,000 टन मक्का किसानों से सीधे क्रय किया जाता है, ये मॉडल संग्रहण, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, कोल्ड स्टोरेज और डिजिटल टूल्स के माध्यम से किसानों को उचित मूल्य देने में सक्षम हैं । ओडिशा की FPOs ने 50 क्विंटल बालांगीर मैंगो सीधे यूरोप निर्यात किया, जिससे किसानों को ₹70 प्रति किलो तक प्राप्त हुआ,यह गुणवत्ता नियंत्रण, पैकेजिंग और ट्रेसबिलिटी पर आधारित थी।

FPOs (कृषक उत्पादक संगठन) छोटे और सीमांत किसानों को संगठित रूप से जोड़कर सामूहिक विपणन, बेहतर सौदेबाजी, वित्तीय पहुँच, और बाजार में विश्वास लाते हैं। लगभग 45,000 FPOs अधिनियमों के तहत पंजीकृत हैं, लेकिन मात्र 4,000 ही सक्रिय फंडिंग वाली FPO हैं जिसमें सुधार की गुंजाइश है। सरकार साप्ताहिक वेबिनार के माध्यम से थ्चे को सीधे कॉर्पोरेट खरीदारों से जोड़ रही हैकृजैसे व्संउ प्दकपं ने यूपी–बिहार से 800 टन मक्का और 3,000 टन गेहूं खरीद कर यह मॉडल सफलतापूर्वक प्रदर्शित किया है।

साथ ही, प्राकृतिक कृषि और पर्यावरण अनुकूल विधियाँ जैसे cow-urine-based biopesticides और waer-resilient cropping को आंध्र प्रदेश में कामयाबी मिली है, जहाँ एक्सट्रीम वेदर का सामना करने वाले फार्म प्राकृतिक खेती अपनाकर बेहतर परिणाम दे रहे हैं। उत्तर प्रदेश के Centres of Excellence (Indo Israel/Dutch) के सहयोग से फूल, सब्जी, dragon fruit, citrus जैसे उच्च मूल्य वाले फलों की आधुनिक खेती को बढ़ावा दे रहे हैं, जिससे किसान वैज्ञानिक तकनीकों से दक्ष हो रहे हैं।

इस पूरी D2C व्यवस्था से उपभोक्ता को ताज़ा, सुरक्षित, पर्यावरण अनुकूल और गुणवत्ता सत्यापित खाद्य वस्तुएँ मिलती हैं जैसे Country Delight, Milk Mantra, Suminter Organics Akshayakalpa जैसे ब्रांड्स D2C मॉडल का सफल उदाहरण हैं जिन्होंने ट्रेसेबिलिटी, गुणवत्ता नियंत्रण, सब्सक्रिप्शन बेस्ड सप्लाई चेन और वैज्ञानिक समर्थन देकर भारतीय कृषि वहाँ तक पहुँचाई है जहाँ किसानों की आय में स्पष्ट सुधार और उपभोक्ता का भरोसा बना है। इस प्रकार, फार्म–टू–कंज़्यूमर डायरेक्ट मार्केटिंग मॉडल छोटे किसानों के लिए आय–सशक्तिकरण, स्थानीय समुदायों का मजबूत समर्थन, आर्थिक प्रतिस्पर्धा और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा का मार्ग सुनिश्चित कर रहा है, और भारत की कृषि को 2025 के बाद आत्मनिर्भर, वैश्विक स्तर पर सशक्त, टिकाऊ और समृद्ध बना रहा है।

■■■

ISSN: 3049-2211

मत्स्य पालन/मत्स्य प्रबंधन में आधुनिक तकनीकी व समाधान

डिजिटल तकनीक अपनाएं, मत्स्य पालन को आसान बनाएं

महेंद्र सिंह– डिवीज़न ऑफ़ फिशरीज रिसोर्स मैनेजमेंट
मुदासीर एम0 किरमानी– डिवीज़न ऑफ़ सोशल साइंसेज
ज्योति उपाध्याय– डिवीज़न ऑफ़ एक्वाकल्चर
शिवानी पाठक एवं मिस्बा रेहमान– डिवीज़न ऑफ़ फिशरीज रिसोर्स मैनेजमेंट
फैकल्टी ऑफ़ फिशरीज, शेर–ऐ–कश्मीर यूनिवर्सिटी ऑफ़ अग्रिकल्चरल साइंसेज एंड टेक्नोलॉजी– कश्मीर (स्कवास्ट–के), जम्मू एंड कश्मीर।

मछली पालन (मत्स्य पालन) एक परंपरागत उद्योग होने के साथ–साथ आर्थिक संपदा भी है, जो विश्व के कई देशों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत जैसे देश में यह न केवल ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार है, बल्कि रोजगार सृजन और खाद्य सुरक्षा का भी अभिन्न हिस्सा है। इसके साथ ही, मत्स्य पालन की उत्पादकता एवं प्रबंधन के लिए समय के साथ नई–नई तकनीकों का अपनाना आवश्यक हो गया है। विकसित तकनीकों एवं सॉफ्टवेयर का प्रयोग कर मत्स्य पालन को अधिक प्रभावी, पारदर्शी और टिकाऊ बनाया जा सकता है। आजकल, कंप्यूटर, मोबाइल ऐप्स और सेंसर तकनीक मछुआरों के काम को आसान बना रही है, जैसे मछली के झुंड का पता लगाने में, जल की गुणवत्ता (पी0एच0, ऑक्सीजन, तापमान) की जानकारी, मौसम और बाजार के भाव का अनुमान तथा मछली की बिक्री में पारदर्शिता को बढ़ाती हैं। वहीं कुछ मछुआरों के लिए उपयोगी मोबाइल ऐप्स जो मछुआरों के काम को आसान बनाते है,

मोबाइल ऐप्स और डिजिटल प्लेटफार्मः

आज बाजार में कई मोबाइल ऐप्स उपलब्ध हैं जो मछुआरों के काम को सरल बनाते हैं। उदाहरण के तौर पर, mFisheries ऐप मौसम, बाजार भाव, नए तरीके और मछली पकड़ने के सुझाव प्रदान करता है। यह ऐप मोबाइल फोन का उपयोग कर मछुआरों को उनके क्षेत्र के बारे में लगातार अपडेट रखता है, जिससे वे जानकारी प्राप्त कर बेहतर निर्णय ले सकते हैं। इसके अतिरिक्त, ई–ग्रेनरी के माध्यम से मछली का भाव एवं विक्रेता एवं खरीदार के बीच पारदर्शिता बढ़ती है, जिससे धोखाधड़ी की सम्भावना कम हो जाती है।

GPS टैगिंग और डिजिटल रिकॉर्डिंगः

मछली पकड़ने की गतिविधियों को अधिक सुव्यवस्थित एवं पारदर्शी बनाने के लिए ळचै टैगिंग का उपयोग किया जाता है। इससे समुद्र या तटीय क्षेत्र में मछलियों के अच्छे स्थानों को चिन्हित किया जा सकता है, जिससे समय और संसाधनों की बचत होती है। इसी के साथ, डिजिटल डायरी का प्रयोग कर मछुआरे अपने दैनिक पकड, खर्च, और आय का रिकॉर्ड रख सकते हैं। यह पारंपरिक कागजी रिकॉर्डिंग की तुलना में अधिक सुरक्षित और सुविधाजनक है।

पानी की गुणवत्ता परीक्षण उपकरण

मछली पालन के संदर्भ में जल का उचित प्रबंधन अत्यंत आवश्यक है। पोर्टेबल वाटर टेस्ट किट का उपयोग कर pH, ऑक्सीजन और तापमान जैसे भौतिक एवं रासायनिक मानदंडों का परीक्षण किया जा सकता है। इससे मछली की स्वस्थता एवं उत्पादन क्षमता का बेहतर प्रबंधन संभव होता है। इन उपकरणों का प्रयोग आसानी से खेतों या तालाबों में किया जा सकता है।

स्मार्ट फ्लोटिंग डिवाइस और IoT

स्मार्ट फ्लोटिंग डिवाइस, जो तालाब या नदी में तैरते हैं, डेटा को सीधे मोबाइल पर भेजते हैं, का उपयोग कर जल की गुणवत्ता व मछली की स्थिति की निगरानी की जा सकती है। इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) तकनीक के माध्यम से इन उपकरणों को अधिक प्रभावी बनाने में मदद मिलती है। यह उपकरण स्वचालित रूप से जल की वर्तमान स्थिति का विश्लेषण कर मछुआरों को सूचनाएं भेजते हैं, जिससे अधिकतम उत्पादन और बेहतर प्रबंधन संभव होता है।

Blockchain एवं AI तकनीक

सप्लाई चेन में धोखाधड़ी एवं मिलावट को रोकने के लिए ब्लॉकचेन तकनीक का प्रयोग किया जा रहा है। इससे मछली की उत्पत्ति, लदान और वितरण की जानकारी सुरक्षित, पारदर्शी एवं अपरिवर्तनीय रूप से ट्रैक की जा सकती है। यह मछली के ट्रेसबिलिटी को बढ़ाता है और गुणवत्ता का प्रमाण प्रदान करता है। ए0आई0 और मशीन लर्निंग का प्रयोग करके मछली की आबादी का अनुमान लगाया जा सकता है। यह तकनीक अत्याधुनिक कंप्यूटर मॉडल का उपयोग कर बताती है कि कब, कहाँ और कितनी मात्रा में मछली मिल सकती है। इस तकनीक से मछली पकड़ने की प्रक्रिया अधिक स्मार्ट और लक्ष्य–oriented हो जाती है। इसके साथ ही, यह नई मछली पकड़ने की तकनीक भी विकसित कर रहा है, जहां स्मार्ट नेटवर्क की मदद से अनुभव और पारंपरिक ज्ञान को मिलाकर पोषण और संरक्षण का संयोजन किया जाता है।

■■■

ISSN: 3049-2211

सब्जी उत्पादन में क्रांति: नियंत्रित परिस्थितियों में गुणवत्ता सुधार के लिए नवीन प्रौद्योगिकियां

अविनाश पाल– बागवानी विभाग, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर।
बलवंत यादव– कीट विज्ञान विभाग, बांदा कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा।

पोषण और स्वास्थ्य के बढ़ते उपभोक्ता ज्ञान के कारण दुनिया भर में प्रीमियम सब्जियों की मांग तेजी से बढ़ रही है। हालांकि, पारंपरिक सब्जी की खेती की तकनीक अक्सर मिट्टी के कटाव, जलवायु परिवर्तन और पानी की कमी जैसी कठिनाइयों का सामना करती है, जिससे फसल उत्पादन और गुणवत्ता कम हो सकती है। इस शोध में सब्जियों के विनियमित उत्पादन को बदलने वाली अत्याधुनिक तकनीकों की जांच की जाती है। सटीक कृषि, ऊर्ध्वाधर खेती, एलईडी प्रकाश व्यवस्था और हाइड्रोपोनिक्स में फसल की गुणवत्ता बढ़ाने, पर्यावरण पर उनके नकारात्मक प्रभावों को कम करने और उत्पादन को बढ़ावा देने की क्षमता की जांच की जाती है। हमारी समीक्षा इन प्रौद्योगिकियों के फायदे और कठिनाइयों को उजागर करते हुए आगे के अनुसंधान और विकास के लिए क्षेत्रों की पहचान करती है।

परिचय

डब्ल्यू0एच0ओ0 की सिफारिशों के अनुसार, प्रति व्यक्ति प्रतिदिन कम से कम 400 ग्राम, या पांच टुकड़े फलों और सब्जियों का सेवन किया जाना चाहिए। सभी उम्र के उपभोक्ताओं को ताजा, पौष्टिक भोजन प्रदान करने के लिए, सब्जियां (शाकाहारी) कई व्यंजनों का एक अनिवार्य घटक हैं। इक्कीसवीं सदी के सबसे महत्वपूर्ण विश्वव्यापी मुद्दों में से एक स्थायी आहार की आवश्यकता है। 2050 तक दुनिया की आबादी 10 बिलियन लोगों तक बढ़ने के अनुमान के साथ, भोजन की मांग में बड़ी वृद्धि होने की संभावना है। ये तकनीकें फसलों के आनुवंशिक लाभ को कम करती हैं और नई फसल की खेती करते समय बहुत समय लेती हैं। इस प्रकार, हम एक बेहतर और उन्नत तकनीक के उपयोग के साथ स्थायी कृषि का विस्तार करने और वैश्विक खाद्य उत्पादन को गति देने के लिए रणनीतियों की योजना बनाने और उन्हें लागू करने में सक्षम हो सकते हैं।

ऐतिहासिक अवलोकन

1. 1800 के दशक से पहले, पूर्व–औद्योगिक युग

परम्परागत कृषि पद्धतियाँ: फसलों को उगाने और काटने के लिए किसान बैलों द्वारा खींचे जाने वाले रेक, कुदाल तथा हल जैसे बुनियादी औजारों का उपयोग करते थे।

फसल चक्र: मिट्टी की उर्वरता और संरचना को संरक्षित करने के लिए, किसानों ने फलियां, अनाज और जड़ वाली सब्जियां उसी क्रम में लगाईं।

खाद: मिट्टी में पशु गोबर और सब्जियों के कचरे जैसे कार्बनिक पदार्थों को शामिल करके, किसान मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए खाद का उपयोग करते हैं।

सिंचाई: अपनी फसलों को पानी देने के लिए, किसानों ने बुनियादी सिंचाई तकनीकों का इस्तेमाल किया, जिसमें खाई, नहरें और वर्षा शामिल हैं।

2. औद्योगिक युग (1800–1940 के दशक)

मशीनीकरण: ट्रैक्टर, हल और अन्य उपकरणों के आविष्कार ने श्रम लागत को कम किया और दक्षता में सुधार किया।

सिंचाई प्रणाली: किसानों द्वारा स्प्रिंकलर, पंप और पाइप सहित अधिक जटिल सिंचाई प्रणालियों का उपयोग किया जाने लगा।

कीटनाशक और उर्वरक: सिंथेटिक कीटनाशकों और उर्वरकों की व्यापक उपलब्धता ने किसानों को बीमारियों और कीटों का बेहतर प्रबंधन करने की अनुमति दी।

ग्रीनहाउस: पहले ग्रीनहाउस के निर्माण के साथ, किसान पूरे वर्ष फसलों की खेती करने में सक्षम थे।

3. युद्ध के बाद की अवधि (1940–1980 के दशक)

ग्रीनहाउस में उत्पादनरू जैसे–जैसे ग्रीनहाउस कई गुना बढ़ गए, किसानों ने फलों, सब्जियों और फूलों जैसी विभिन्न प्रकार की फसलों को उगाने के लिए उनका उपयोग करना शुरू कर दिया। हाइड्रोपोनिक्सरू हाइड्रोपोनिक प्रणालियों के विकास के साथ, किसान अब गंदगी के बजाय पोषक तत्वों से भरपूर घोल में फसलें उगा सकते हैं।

सटीक कृषि: पैदावार को अधिकतम करने और कचरे को कम करने के लिए, किसानों ने मिट्टी परीक्षण और फसल निगरानी सहित सटीक कृषि तकनीकों का उपयोग करना शुरू किया।

एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम): आईपीएम विधियां, जो कीटों को नियंत्रित करने के लिए रासायनिक, जैविक, सांस्कृतिक और भौतिक उपायों के संयोजन को नियोजित करती हैं, अधिक लोकप्रिय हो गई हैं। सब्जियों के लिए पारंपरिक खेती कई तरह की चुनौतियों का सामना करती है, चुनौतियों से लेकर बीज की गुणवत्ता से लेकर स्थिरता तक।

4. आधुनिकतावाद युग (1990–वर्तमान)

ऊर्ध्वाधर खेती: ऊर्ध्वाधर खेती तकनीक लोकप्रियता में बढ़ी है। वे किसानों को परिवहन पर पैसे बचाने के दौरान शहरी क्षेत्रों में भोजन की खेती करने की अनुमति देते हैं।

एलईडी रोशनी: जैसे–जैसे एलईडी ग्रो लाइट्स का प्रसार हुआ, उत्पादक ऊर्जा लागत कम करने और विशेष फसलों के लिए विशेष प्रकाश व्यवस्था प्रदान करने में सक्षम थे।

ड्रोन और उपग्रह इमेजरी: फसलों पर नज़र रखने, कटाई का पूर्वानुमान लगाने और उर्वरक और सिंचाई इनपुट को अधिकतम करने के लिए, किसानों ने ड्रोन और उपग्रह इमेजरी का उपयोग करना शुरू कर दिया।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) और मशीन लर्निंग (एमएल): इन तकनीकों का उपयोग डेटा का विश्लेषण करने, पैदावार का पूर्वानुमान लगाने और खेती के तरीकों में सुधार करने के लिए किया जा रहा है, जिससे किसानों को बेहतर निर्णय लेने में मदद मिलती है।

इंटरनेट ऑफ थिंग्स: सिंचाई, उर्वरक आपूर्ति और पर्यावरणीय परिस्थितियों पर अधिक सटीक प्रबंधन सेंसर और उपकरणों के बढ़ते उपयोग से संभव हुआ है।

5. भविष्य के विकास

स्वायत्त खेती: एआई और रोबोटिक्स का उपयोग स्वायत्त कृषि प्रणाली बनाने के लिए किया जा रहा है जो किसानों को रोपण, पानी और कटाई जैसे विभिन्न प्रकार के कामों को स्वचालित करने की अनुमति देगा।

जीन एडिटिंग: कृषि वृद्धि के लिए सीआरआईएसपीआर और अन्य जीन संपादन तकनीकों की जांच की जा रही है, जिससे किसान कीट और सूखा प्रतिरोध जैसी वांछित विशेषताओं वाली फसलें बना सकते हैं।

शहरी कृषि: खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देने और परिवहन लागत को कम करने के प्रयास में, शहर रूफटॉप गार्डन, सामुदायिक उद्यान और ऊर्ध्वाधर खेतों में निवेश कर रहे हैं। शहरी कृषि लोकप्रियता में बढ़ रही है।

निष्कर्ष

नई प्रौद्योगिकियों की शुरुआत के बाद से, सब्जी उत्पादक क्षेत्र नाटकीय रूप से बदल गया है। सब्जियों के उत्पादन, वितरण और कटाई को बदलने के लिए सटीक खेती, ऊर्ध्वाधर खेती, एलईडी लाइटिंग, हाइड्रोपोनिक्स और कृत्रिम बुद्धिमत्ता सभी को जोड़ा जा रहा है। बढ़ी हुई पैदावार, कम पर्यावरणीय प्रभाव और बेहतर फसल की गुणवत्ता इन तकनीकों से संभव है। इन नवीन प्रौद्योगिकियों के लाभ विभिन्न हैं जैसे कि बेहतर फसल की गुणवत्ता, बढ़ी हुई पैदावार, पर्यावरणीय प्रभाव में कमी, और बढ़ी हुई खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ उच्च प्रारंभिक निवेश लागत, सीमित पहुंच, डेटा प्रबंधन और विश्लेषण सहित विभिन्न चुनौतियां थीं।

***

ISSN: 3049-2211

सहजन: एक बहु उपयोगी पेड़

बृजेश कुमार यादव एवं अल्का जोशी
खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली।

सहजन (*Moringa oleifera*) को विभिन्न नामों से जाना जाता है, जैसे मोरिंगा, ड्रमस्टिक (सहजन) और 'मिराकल ट्री'। भारत में उत्पन्न हुआ यह पौधा गंभीर सूखा एवं हल्की ठंढ की परिस्थितियों के प्रति अत्यधिक सहनशील है, जिसके कारण यह विश्व के उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय दोनों क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इस पेड़ की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसे अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। वर्तमान में, जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न सामाजिक–आर्थिक, स्वास्थ्य संबंधी एवं पर्यावरणीय चुनौतियों के स्थायी समाधान के रूप में मोरिंगा की खेती एवं उपयोग को एक जलवायु–अनुकूलन (क्लाइमेट–स्मार्ट) विकल्प के तौर पर बढ़ावा दिया जा रहा है। यह पौधा ग्रामीण क्षेत्रों में सतत एवं पर्यावरण–अनुकूल विकास प्रक्रियाओं को सुदृढ़ बनाने में सक्षम है, जिससे स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाया जा सकता है। विशेष रूप से विकासशील देशों के ग्रामीण अंचलों में, सदियों से स्थानीय लोग अपने आहार में विभिन्न जंगली पौधों का उपयोग करते आए हैं। इनमें मोरिंगा का विशेष स्थान रहा है, क्योंकि यह न केवल पोषण प्रदान करता है बल्कि इसके औषधीय गुण भी उल्लेखनीय हैं।

मोरिंगा (सहजन) के बीज, पत्तियों और अर्क का विभिन्न प्रकार से उपयोग किया जाता है। इस पेड़ के स्वास्थ्य लाभ अनेक हैं, जिनमें मधुमेह नियंत्रण, जोड़ों के दर्द में आराम तथा हृदय स्वास्थ्य का संवर्धन प्रमुख हैं। मोरिंगा पेड़ के सभी भाग – पत्तियाँ, बीज, जड़ एवं फूल – सभी उपयोगी हैं। पेय और औषधीय अर्क तैयार करने के लिए छाल को पानी में उबाला जाता है अथवा अल्कोहल में संपृक्त किया जाता है। इसका उपयोग विभिन्न पाचन संबंधी समस्याओं जैसे पेट दर्द, अल्सर नियंत्रण और पाचन प्रक्रिया में सुधार के लिए किया जाता है। मोरिंगा की पत्तियों को सुखाकर पाउडर के रूप में भी सेवन किया जाता है, जो एक पौष्टिक पूरक के रूप में कार्य करता है। सहजन की पत्तियों का उपयोग पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों में भी व्यापक रूप से किया जाता रहा है।

मोरिंगा पत्ती के अर्क में प्रति 100 ग्राम में 9.1 ग्राम कार्बोहाइड्रेट (जिसमें 2.1 ग्राम आहारीय रेशा शामिल है), 1.7 ग्राम वसा और 8.1 ग्राम प्रोटीन पाया जाता है। इसमें विटामिन्स की प्रचुर मात्रा उपलब्ध होती है, जिसमें विटामिन । (80 μg), थायमिन (B1 – 0.103 मिलीग्राम), राइबोफ्लेविन (B_2 – 0.112 मिलीग्राम), नियासिन (B3 – 1.5 मिलीग्राम), पैंटोथेनिक अम्ल (B5 – 0.48 मिलीग्राम), विटामिन B6 (0.129 मिलीग्राम), फोलेट (B9 – 41 μg) और विटामिन C (8.6 मिलीग्राम) शामिल हैं। इसके अलावा, यह कैल्शियम (99.1 मिलीग्राम), लौह (1.3 मिलीग्राम), मैग्नीशियम (35.1 मिलीग्राम), मैंगनीज (0.119 मिलीग्राम), फॉस्फोरस (70.8 मिलीग्राम), पोटैशियम (471 मिलीग्राम), सोडियम (70 मिलीग्राम) और जिंक (0.85 मिलीग्राम) जैसे आवश्यक खनिज तत्वों से भी समृद्ध है। मोरिंगा अर्क में आवश्यक अमीनो अम्ल भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, जिनमें थ्रेओनीन (36.77 μg/mL), वेलिन (22.1 μg/mL), मेथियोनीन (2.13 μg/mL), ल्यूसीन (20.5 μg/mL), आइसोल्यूसीन (31.8 μg/mL), फेनिलएलनिन (36.8 μg/mL), हिस्टिडीन (30.88 μg/mL), लाइसिन (27.67 μg/mL) और आर्जिनिन (21.45 μg/mL) प्रमुख हैं।

चित्र: सहजन के फूल और पत्तियाँ

साहित्यिक साक्ष्यों एवं वैज्ञानिक अध्ययनों से ज्ञात होता है कि मोरिंगा ओलीफेरा (सहजन) एक बहुउद्देशीय औषधीय पादप है जो लगभग 300 प्रकार की स्वास्थ्य समस्याओं की रोकथाम एवं उपचार में सक्षम है। पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों में इसकी पत्तियों का प्रयोग सदियों से निवारक और उपचारात्मक दोनों प्रयोजनों हेतु किया जाता रहा है। समकालीन वैज्ञानिक शोधों ने इसके विभिन्न रूपात्मक भागों के औषधीय उपयोग को प्रमाणित किया है, जिसमें हृदय रोग, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, श्वसन संबंधी विकार, पाचन तंत्र की समस्याएं, त्वचा रोग, सूजन संबंधी विकार, ज्वर एवं गठिया जैसी बहुमुखी स्वास्थ्य चुनौतियां सम्मिलित हैं। इस पादप में पाए जाने वाले जैवसक्रिय यौगिकों ने इसे एक उत्कृष्ट एनाल्जेसिक,

प्रतिशोथ, मूत्रवर्धक, रक्तचाप नियामक, प्रतिऑक्सीकारक एवं कर्करोधी गुणों से युक्त प्राकृतिक चिकित्सक बना दिया है। विशेष रूप से इसकी पत्तियों में पोषक तत्वों एवं औषधीय गुणों का अनूठा संयोजन इसे एक उत्कृष्ट पोषण–औषधीय (न्यूट्रास्यूटिकल) स्रोत के रूप में स्थापित करता है।

तालिकाः मोरिंगा के कुछ सामान्य औषधीय उपयोग

भाग	पारंपरिक उपयोग
पत्तियां	हृदय उत्तेजक, मलेरिया, गठिया, त्वचा रोग, उच्च रक्तचाप, फ्लू, टाइफाइड बुखार, सामान्य सर्दी, सूजन, परजीवी रोग, मधुमेह, गर्भनिरोधक उपाय, जीनियो–मूत्र बीमारियाँ, प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देना, जीवाणुरोधी, मलेरियारोधी, बाहरी ट्यूमर, दस्त, पेचिश, कोलाइटिस, घाव, त्वचा संक्रमण, एनीमिया, खरोंचें, त्वचा पर चकत्ते, उम्र बढ़ना, घाव भरना, मधुमेह और संबंधित विकार, पेट दर्द, एचआईवी संक्रमण, दमा।
बीज	मस्से, कैंसर, उच्च रक्तचाप, मधुमेह
फूल	ट्यूमर, सूजन, हिस्टीरिया, प्लीहा का बढ़ना, मांसपेशियों के रोग, कामोत्तेजक पदार्थ, फ्लू, मधुमेह
जड़ कंद	दांत दर्द, कृमिनाशक, चींटी पक्षाघातनाशक, उच्च रक्तचाप, मलेरिया, पेट दर्द, मधुमेह, मिर्गी, प्रसव के दौरान सहायता (रखे गए प्लेसेंटा को बाहर निकालें), अस्थमा।
छाल	पाचन में सहायक, पेट दर्द, खराब दृष्टि, अल्सर, उच्च रक्तचाप, जोड़ों का दर्द, एनीमिया, मधुमेह, दर्द कम करता है, गर्भपात करने वाला, खांसी।
बीज का तेल	गठिया, तीव्र गठिया
गोंद	बुखार, पेचिश, दमा, दंत क्षय
राल	आग से जलने वाले घाव
फली	शिशु पक्षाघात या आक्षेप

मोरिंगा ओलीफेरा को बीज और कलमों से प्रवर्धन किया जा सकता है। यह 500 मीटर की ऊंचाई से नीचे सीधी धूप में सबसे अच्छा बढ़ता है। यह विभिन्न प्रकार की मिट्टी की स्थितियों को सहन करता है, लेकिन तटस्थ से थोड़ी अम्लीय (पीएच 6.3–7.0), अच्छी जल निकासी वाली रेतीली या दोमट मिट्टी को प्राथमिकता देता है। न्यूनतम वार्षिक वर्षा आवश्यकताएँ 250 मिमी और अधिकतम 3,000 मिमी से अधिक अनुमानित हैं, लेकिन जलयुक्त मिट्टी में जड़ें सड़ने लगती हैं। भारी वर्षा वाले क्षेत्रों में, पानी के बहाव को प्रोत्साहित करने के लिए छोटी पहाड़ियों पर पेड़ लगाए जा सकते हैं। लंबे मूसला जड़ कंद की उपस्थिति इसे सूखे की अवधि के लिए प्रतिरोधी बनाती है। तापमान सीमा 25–35 डिग्री सेल्सियस है, लेकिन पेड़ छाया में 48 डिग्री तक सहन कर सकता है और यह हल्की ठंढ से भी बच सकता है। अपने पहले वर्ष के दौरान, मोरिंगा का पेड़ पांच मीटर ऊंचाई तक बढ़ेगा और फूल और फल देगा। अकेला छोड़ दिया जाए, तो पेड़ अंततः 30 सेमी चौड़े तने के साथ 12 मीटर ऊंचाई तक पहुंच सकता है; हालाँकि, पेड़ को सालाना जमीन से एक मीटर तक काटा जा सकता है। पेड़ जल्दी ठीक हो जाएगा और आसान पहुंच के भीतर पत्तियां और फलियां पैदा करेगा। तीन वर्षों के भीतर एक पेड़ से सालाना 400–600 फलियाँ पैदा होंगी और एक परिपक्व पेड़ 1,600 तक फलियाँ पैदा कर सकता है।

एक प्राकृतिक संसाधन के रूप में, मोरिंगा में काफी संभावनाएं हैं क्योंकि यह खाद्य/पोषण सुरक्षा, स्वास्थ्य–जल संबंध से जुड़ी कई समस्याओं का समाधान कर सकता है। मोरिंगा एक अविश्वसनीय रूप से उपयोगी औषधीय जड़ी बूटी है और इसका पोषण मूल्य काफी अधिक है। उदाहरण के लिए, सूक्ष्म पोषक तत्व शारीरिक बाधाओं (त्वचा/म्यूकोसा), सेलुलर प्रतिरक्षा और एंटीबॉडी उत्पादन का समर्थन करके शरीर की प्राकृतिक सुरक्षा में योगदान करते हैं। ये सभी स्तर अवसरवादी संक्रमणों और बीमारियों की रोकथाम में महत्वपूर्ण हैं। मोरिंगा में सूक्ष्म पोषक तत्व और फाइटोकंपाउंड (जैसे, एंटीऑक्सिडेंट) होते हैं, जो कोविड–19 सहित कई बीमारियों से जुड़ी स्वास्थ्य समस्याओं में चिकित्सीय लाभ प्रदान करते हैं। यह एक असाधारण रूप से स्वास्थ्यवर्धक जड़ी–बूटी है जो खाने योग्य है और इसे आसानी से और सस्ते में उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया और उगाया जा सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले अनेक समुदाय अशुद्ध जल का उपयोग करने के कारण जलजनित रोगों के प्रति संवेदनशील होते हैं। मोरिंगा बीज पाउडर इस समस्या का एक प्रभावी एवं किफायती समाधान प्रस्तुत करता है, जो महंगी जलशोधन तकनीकों और एल्यूमिनियम सल्फेट जैसे रासायनिक शोधकों का विकल्प बन सकता है। शोधों से पता चला है कि मोरिंगा बीज पाउडर जल से बैक्टीरिया सहित विभिन्न हानिकारक अशुद्धियों को प्रभावी ढंग से दूर करने में सक्षम है। यह प्राकृतिक जलशोधन विधि न केवल जलजनित रोगों की संक्रमण दर को कम कर सकती है, बल्कि COVID–19 जैसी महामारियों के दौरान स्वच्छ जल की उपलब्धता सुनिश्चित करके सार्वजनिक स्वास्थ्य संकट को कम करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। मोरिंगा आधारित यह तकनीक स्थानीय संसाधनों पर निर्भर ग्रामीण समुदायों के लिए विशेष रूप से लाभकारी सिद्ध हो सकती है।

मोरिंगा–आधारित कृषि वानिकी एक टिकाऊ और जलवायु–अनुकूल कृषि पद्धति के रूप में उभर रही है जो खाद्य सुरक्षा और पोषण संबंधी चुनौतियों का समाधान प्रस्तुत करती है। यह पर्यावरणीय गुणवत्ता में सुधार लाकर जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों को कम करती है, साथ ही आर्थिक रूप से व्यवहार्य होने के साथ–साथ जीवन की गुणवत्ता को भी बढ़ाती है। इस प्रकार यह पद्धति सतत विकास के एकीकृत लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

***

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

सीवेज स्लज: पर्यावरण अनुकूल खेती की दिशा में कदम

पवन कुमार, प्रवीन कुमार, नरेश कुमार, रचना, अंकित
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा।

परिचय

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में सतत और पर्यावरण अनुकूल खेती की आवश्यकता दिनों दिन बढ़ती जा रही है। रासायनिक उर्वरकों पर बढ़ती निर्भरता से मृदा की उर्वरता में गिरावट, जल प्रदूषण और जैव विविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। ऐसे में वैकल्पिक एवं पर्यावरण मित्र तरीकों की तलाश की जा रही है, जिनमें सीवेज स्लज (Sewage Sludge) एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। सीवेज स्लज एक ऐसा ही विकल्प है, जो जैविक एवं अकार्बनिक तत्वों से भरपूर होने के साथ–साथ अपशिष्ट निपटान की समस्या का समाधान भी प्रदान करता है।

सीवेज स्लज क्या है?

सीवेज स्लज, जो सामान्यतः नगरों, कस्बों तथा औद्योगिक क्षेत्रों से निकलने वाले गंदे पानी (सीवेज) के शोधन के उपरांत बचा हुआ ठोस पदार्थ होता है। जैविक रूप से समृद्ध पदार्थ है। यह ठोस अवस्था में होता है और इसमें उच्च मात्रा में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, जैविक कार्बन, सूक्ष्म पोषक तत्व (Fe, Zn, Cu, Mn), ह्यूमिक पदार्थ और कुछ मात्रा में भारी धातुओं से युक्त होता हैं। उपयुक्त ढंग से प्रसंस्करण के बाद यह एक प्रभावशाली जैविक उर्वरक के रूप में कार्य कर सकता है। यह न केवल फसल उत्पादन में सहायक है, बल्कि अपशिष्ट प्रबंधन, पर्यावरणीय संरक्षण और सतत विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति में भी योगदान देता है।

सीवेज स्लज का कृषि में प्रयोग

सीवेज स्लज का नियंत्रित एवं सुरक्षित प्रयोग कृषि में एक जैविक उर्वरक के रूप में किया जा सकता है। जब इसे समुचित तरीके से प्रोसेस किया जाता है (जैसे कि कंपोस्टिंग, सन ड्राइंग या थर्मल ट्रीटमेंट), तो यह रसायन–मुक्त विकल्प के रूप में कार्य करता है।

1. जैविक उर्वरक के रूप में: सीवेज स्लज में उपस्थित जैविक पदार्थ और पोषक तत्व मृदा की उर्वरता में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। जब इसे कृषि भूमि में मिलाया जाता है, तो यह मृदा की बनावट (soil texture), जल धारण क्षमता (water holding capacity), और पोषक तत्वों की उपलब्धता को सुधारता है। इससे फसल की जड़ प्रणाली मजबूत होती है और पौधों की समग्र वृद्धि बेहतर होती है।

2. मृदा स्वास्थ्य में सुधार: सीवेज स्लज में उपस्थित ह्यूमिक पदार्थ (Humic substances) और सूक्ष्म जीवाणु मृदा में उपयोगी माइक्रोब्स की संख्या को बढ़ाते हैं। इससे मृदा का pH संतुलन, एंजाइम गतिविधियाँ और नाइट्रोजन स्थिरीकरण बेहतर होता है।

3. उर्वरक मिश्रणों में सम्मिलन: सीवेज स्लज को अकेले या अन्य जैविक स्रोतों (जैसे FYM, vermicompost) के साथ मिलाकर कस्टमाइज्ड खाद तैयार की जा सकती है। इससे पोषक तत्वों का अनुपात संतुलित होता है और मिट्टी के विभिन्न प्रकारों में उपयुक्तता बढ़ती है।

4. पोषक तत्वों की आपूर्ति: इसमें मौजूद नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैशियम आदि फसल की वृद्धि के लिए आवश्यक हैं।

5. मृदा सूक्ष्मजीवों की सक्रियता: जैविक पदार्थों के कारण मिट्टी में सूक्ष्म जीवों की संख्या बढ़ती है, जिससे पोषक तत्वों का चक्रण बेहतर होता है।

6. कचरा प्रबंधन: सीवेज स्लज का कृषि में उपयोग शहरी कचरे के प्रबंधन में भी मदद करता है।

पोषक तत्वों की पूर्ति

सीवेज स्लज जैविक पदार्थों से भरपूर एक प्राकृतिक उर्वरक है, जिसमें विभिन्न प्राथमिक (Primary), द्वितीयक (secondary) एवं सूक्ष्म पोषक तत्त्व (Micronutrients) उपस्थित होते हैं। इसके नियमित व नियंत्रित प्रयोग से मृदा में पोषण संतुलन स्थापित होता है, जो सतत कृषि के लिए अत्यंत आवश्यक है।

क.) सीवेज स्लज में नाइट्रोजन कार्बनिक रूप (Organic Nitrogen) में पाया जाता है, जो धीरे–धीरे खनिजीकृत होकर पौधों को उपलब्ध होता है।

ख.) स्लज में पाया जाने वाला ऑर्थो फॉस्फेट (Orthophosphate) रूप फॉस्फोरस का घुलनशील रूप होता है, जो जड़ों को आसानी से मिलता है।

ग.) सीवेज स्लज में पोटैशियम की मात्रा अपेक्षाकृत कम हो सकती है, परंतु फसल अनुसार पर्याप्त हो सकती है।

घ.) सूक्ष्म पोषक तत्त्व (Zn, Fe, Cu, Mn, B) बहुत ही अल्प मात्रा में आवश्यक होते हैं, लेकिन उनकी भूमिका पौधों की चयापचय (Metabolism) क्रियाओं में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। सीवेज स्लज में उपस्थित सूक्ष्म तत्त्व फसलों की गुणवत्ता और उत्पादन क्षमता को बढ़ाने में मदद करते हैं।

पर्यावरणीय और सामाजिक लाभ

1. अपशिष्ट प्रबंधन का समाधान: प्रत्येक वर्ष भारत में लाखों टन सीवेज स्लज उत्पादित होता है। इसका कृषि में उपयोग ठोस अपशिष्ट को कम करने में सहायक है।

2. ग्रीन हाउस गैसों में कमी: सीवेज स्लज के जैविक अंश मिट्टी में कार्बन स्थिरीकरण में सहायक होते हैं, जिससे ग्रीन हाउस गैसों (GHGs) के उत्सर्जन में कमी आती है।

3. कृषि लागत में कमी: रासायनिक उर्वरकों की तुलना में स्लज सस्ता होता है। इसके उपयोग से किसानों की उत्पादन लागत घटती है।

4. सामाजिक स्वीकार्यता और रोजगार: स्लज प्रबंधन, प्रोसेसिंग और सप्लाई चैन के जरिये स्थानीय रोजगार के अवसर बनते हैं। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच सहयोग की भावना बढ़ती है।

5. हरित कृषि को बढ़ावा: जैविक एवं पर्यावरण अनुकूल खेती की ओर कदम।

सावधानियाँ एवं चुनौतियाँ

यद्यपि सीवेज स्लज में कई लाभ हैं, लेकिन कुछ सावधानियाँ आवश्यक हैं–

1. भारी धातुएँ (Heavy Metals): अनुपचारित सीवेज स्लज में सीसा (Pb), कैडमियम (Cd), पारा (Hg) जैसी धातुएँ हो सकती हैं जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।

2. रोग जनक जीवाणु एवं वायरस: यदि स्लज का समुचित उपचार न हो तो रोग फैलने की आशंका हो सकती है।

3. उचित मात्रा एवं समय: अधिक मात्रा में उपयोग से मृदा प्रदूषण हो सकता है।

4. जन जागरूकता की कमी: किसानों को इसके सुरक्षित उपयोग के विषय में जानकारी देना आवश्यक है।

स्लज उपयोग से पहले उसमें मौजूद भारी धातुएँ जैसे Pb, Cd, Cr, Hg और रोग जनक सूक्ष्म जीवों की जाँच अनिवार्य है। नमी और दुर्गंध नियंत्रण हेतु पूर्व उपचार आवश्यक होता है। इसके लिए Composting, Lime Stabilization, और Thermal Drying जैसी विधियाँ अपनाई जाती हैं, जो स्लज को सुरक्षित और कृषि योग्य बनाती हैं।

भारत में सीवेज स्लज उपयोग की संभावनाएँ

भारत में लगभग 70% शहरी जल शोधन संयंत्रों से सीवेज स्लज प्राप्त होता है, जिसमें से अधिकांश नष्ट कर दिया जाता है। यदि इस स्लज का वैज्ञानिक तरीके से कृषि में उपयोग किया जाए, तो यह हर वर्ष हजारों करोड़ की खाद की बचत कर सकता है और भारतीय कृषि को पर्यावरणीय दृष्टिकोण से सशक्त बना सकता है।

निष्कर्ष

सीवेज स्लज का नियंत्रित, सुरक्षित और वैज्ञानिक ढंग से उपयोग भारतीय कृषि के लिए एक क्रांतिकारी कदम हो सकता है। यह केवल उपज बढ़ाने का ही साधन नहीं, बल्कि शहरी अपशिष्ट के पुनर्चक्रण, पर्यावरण संरक्षण और किसानों की आय वृद्धि का प्रभावी साधन भी है। जरूरत है केवल जन–जागरूकता, वैज्ञानिक मार्गदर्शन और सशक्त नीति निर्धारण की।
यह समय है– कचरे को खजाना बनाने का।

***

कृषक मंच
ISSN: 3049-2211

औषधिय गुणों से प्रचुर है बैंगनी फूलगोभी

दिनेश कुमार मीना*, संजय कुमार, दीक्षा संघमित्रा, ऋषभ रतन कुमार पाल, एवं धीरज कुमार सरोज**
*बागवानी विभाग, स्कूल ऑफ कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय (केंद्रीय विश्वविद्यालय), लखनऊ।
**आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या।

खेती में लगातार नये–नये प्रयोग हो रहे हैं। इससे उन्नत किस्म के बीज किसानों को मिल रहे हैं। किसानों को इससे कई वैरायटी भी मिलती है, अब किसान सफेद नहीं कलरफूल गोभी की खेती कर रहे हैं। इस पर विशेष जानकारी बाबासाहैब भीमराव अंबेडकर केंद्रीय विश्वविद्यालय के शोधछात्र दिनेश कुमार मीना ने बताया है, की सामान्य गोभी की तुलना में रंगीन फूलगोभी में कई तरह के औषधीय गुण पाएं जाते हैं। यह सामान्य गोभी की तुलना मे 10 गुना अधिक पोषक तत्वो से भरपूर है, जो मानव शरीर के लिए अत्यंत ही लाभकारी है, किसानों को वैज्ञानिक सलाह लेकर इसकी खेती करनी चाहिए इससे किसान को कम मेहतन में ज्यादा लाभ होगा।

1. परिचय

बैंगनी गोभी फूलगोभी की एक शानदार और पौष्टिक किस्म है। जो जीवंत सौंदर्य के साथ–साथ बेहतर पोषण मूल्य का संयोजन करती है। इसका बैंगनी रंग एंथोसायनिन नामक एंटीऑक्सीडेंट यौगिकों की वृद्धि का परिणाम है, जो इसे कई संभावित स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है। बैंगनी फूलगोभी फरवरी 2020 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली में विकसित की गई फूलगोभी की नई किस्म है। बैंगनी फूलगोभी सबसे जीवंत और आकर्षक बड़ी सब्जियों में से एक है जिसे आप बगीचे में उगते हुए देखेंगे। बैंगनी फूलगोभी आपके स्वास्थ्य को एक अनोखे तरीके से लाभ पहुँचाती है। यह हृदय रोग, मधुमेह और कुछ कैंसर जैसी पुरानी बीमारियों के जोखिम को कम करने में मदद कर सकते हैं। यह दुनिया के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय भागों में उगाई जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण सब्जी फसलों में से एक है। कृषि अनुसंधान में हाल के नवाचारों ने रंगीन किस्मों के विकास को जन्म दिया है, जिसमें आकर्षक बैंगनी फूलगोभी भी शामिल है। खाने योग्य हिस्से में औसत एंथोसायनिन सांद्रता 43.7mg/100 ग्राम खाने योग्य हिस्से की होती है। औसत बिक्री योग्य कर्ड का वजन 0.76 किलोग्राम होता है।

2. बैंगनी फूलगोभी है क्या

बैंगनी फूलगोभी एक प्रकार की सुनहरी सब्जी है जो दिखने में हरी गोभी जैसी होती है, लेकिन इसकी पत्तियाँ गहरे लाल या बैंगनी रंग की होती हैं। इसका बैंगनी रंग इसमें मौजूद एंथोसाइनिन नामक प्राकृतिक यौगिक के कारण होता है, जो इसे न केवल रंग प्रदान करता है, बल्कि इसे कई स्वास्थ्य लाभ भी देता है। एंथोसाइनिन एक प्रकार का एंटीऑक्सीडेंट है, जो आमतौर पर बैंगनी, नीले, और लाल फलों और सब्जियों में पाया जाता है, और यह सलाद, सूप और अन्य व्यंजनों में इस्तेमाल की जा सकती है। बैंगनी गोभी में एंटीऑक्सिडेंट्स, विटामिन C, और फाइबर प्रचुर मात्रा में होते हैं, जो इसे सेहत के लिए फायदेमंद बनाते हैं। वर्तमान मे इसकी खेती समस्तीपुर जिला के चकसलेम गांव के रहने वाले अजीत कुमार शर्मा कर रहे हैं, उन्होंने बताया की वे एक दिन अखबार में इस फूलगोभी की खाने का फायदा के बारे में लिखा हुआ देखे थे, तभी से ऑनलाइन रंगीन फूलगोभी का बीज मंगा कर निरन्तर खेती कर रहा हूं। जिससे दिनों दिन मेरा व्यवसाय और उपज बढ़ रही है।

3. कितने प्रतिशत खेती हो रही है

21वीं सदी की शुरुआत में किसान बाजारों में रंगीन फूलगोभी की किस्में प्रचलित हो गई और आज बैंगनी फूलगोभी को उत्तरी अमेरिका, यूरोप, एशिया और ऑस्ट्रेलिया के विशेष किराना दुकानों, थोक विक्रेताओं और किसान बाजारों में साल भर पाया जा सकता है। यदि समग्र खेती के प्रतिशत के संदर्भ में देखें, तो बैंगनी पत्तागोभी की खेती वैश्विक स्तर पर सामान्य गोभी की तुलना में 5–10% के बीच होती है। इसका मुख्य कारण इसकी विशिष्टता और रंग के कारण सीमित उपयोग होता है, जो सामान्य सफेद या हरी गोभी के मुकाबले कम उत्पादन और मांग में होता है। लेकिन इसके स्वास्थ्य लाभ और पोषक तत्वों के कारण बैंगनी पत्तागोभी की

लोकप्रियता धीरे–धीरे बढ़ रही है, जिससे भविष्य में इसकी खेती का प्रतिशत बढ़ सकता है।

4. बैंगनी फूलगोभी के औषधिय गुण

क्र. स.	औषधीय गुण	विवरण
1	एंटीऑक्सीडेंट	एंथोसायनिन्स के कारण, जो मुक्त कणों से बचाव करते हैं और ऑक्सीडेटिव तनाव को कम करते हैं।
2	विटामिन C का स्रोत	प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है, त्वचा की सेहत में सुधार करता है, और घावों को जल्दी ठीक करता है।
3	फाइबर से भरपूर	पाचन तंत्र को स्वस्थ बनाए रखता है, कब्ज और अन्य पाचन समस्याओं में राहत प्रदान करता है।
4	कैंसर से बचाव	सल्फोराफेन यौगिक, जो कैंसर सेल्स की वृद्धि को रोकने और उन्हें नष्ट करने में मदद करता है।
5	हड्डियों की मजबूती	विटामिन ज्ञ और कैल्शियम का अच्छा स्रोत, हड्डियों को मजबूत करता है।
6	मेटाबोलिज्म को बढ़ावा	इसमें मौजूद पोषक तत्व मेटाबोलिज्म को बढ़ावा देते हैं, जिससे ऊर्जा स्तर में सुधार होता है।

5. किसानों की आय में बढ़ोतरी कैसे हो

बैंगनी गोभी की खेती के सबसे आकर्षक लाभों में से एक यह है कि इससे किसानों की आय में वृद्धि हो सकती है। एक अनूठी उपस्थिति और बेहतरीन पोषण लाभों वाली उच्च मूल्य वाली फसल के रूप में, बैंगनी गोभी को पारंपरिक सफ़ेद फूलगोभी की तुलना में प्रीमियम मूल्य पर बेचा जा सकता है। यह प्रीमियम मूल्य निर्धारण फसल के अतिरिक्त मूल्य को दर्शाता है और किसानों के लिए उच्च लाभ मार्जिन का कारण बन सकता है। बैंगनी गोभी को अपनाकर, किसान ऐसे विशिष्ट बाजारों में पहुँच सकते हैं जो विशेष उत्पादों के लिए अधिक भुगतान करने को तैयार हैं। इससे न केवल उनकी आय के स्रोतों में विविधता आती है, बल्कि एक ही फसल पर निर्भर रहने से जुड़े वित्तीय जोखिम भी कम होते हैं। कम इनपुट लागत, उच्च बाजार मूल्यों के साथ मिलकर, उस क्षेत्र में फूलगोभी की खेती की समग्र लाभप्रदता को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा सकते हैं।

6. बाजार और उपभोक्ताओं की उपलब्धता का कैसे पता लगाए

बाजार में बैंगनी गोभी की शुरुआत उत्साह से हुई है, खास तौर पर उन उपभोक्ताओं के बीच जो पौष्टिक और दिखने में आकर्षक सब्ज़ियों की तलाश में हैं। इस फूलगोभी का चमकीला रंग इसे किराने की दुकानों और बाज़ारों में सबसे अलग बनाता है, लोगों का ध्यान आकर्षित करता है और उपभोक्ताओं को कुछ नया आज़माने के लिए प्रोत्साहित करता है। बैंगनी फूलगोभी बगीचे में उगने वाली सबसे जीवंत और आकर्षक बड़ी सब्ज़ियों में से एक है। कीमत के मामले में, बैंगनी गोभी को अक्सर एक प्रीमियम उत्पाद के रूप में पेश किया जाता है, इस प्रीमियम स्थिति ने इस किस्म के लिए एक खास बाज़ार बनाने में मदद की है, जहाँ उपभोक्ता अतिरिक्त पोषण लाभों और सौंदर्य अपील के लिए अधिक कीमत चुकाने को तैयार हैं। किसानों के लिए, यह अपनी फसल की पेशकश में विविधता लाने और विशेष सब्जियों के बढ़ते बाज़ार का लाभ उठाने का अवसर प्रस्तुत करता है।

7. सामान्य गोभी और बैंगनी गोभी उत्पादन और दाम में अंतर

विवरण	सामान्य गोभी (सफेद गोभी)	बैंगनी गोभी
उत्पादन क्षमता	100 टन (औसतन)	40 टन (औसतन)
उगाने की अवधि	60–90 दिन	75–100 दिन
उपलब्धता	पूरे वर्ष	सीमित उपलब्धता
दाम	₹20–₹40 प्रति किलोग्राम	₹80–₹200 प्रति किलोग्राम
जलवायु आवश्यकताएँ	सामान्य जलवायु	ठंडी जलवायु
पोषण मूल्य	विटामिन C, K, फाइबर	एंथोसायनिन, अधिक एंटीऑक्सीडेंट
मांग	रोज़ाना के उपयोग के लिए	विशेष व्यंजन और स्वास्थ्य– संवर्धित खाद्य पदार्थ

यह सारणी सामान्य गोभी और बैंगनी गोभी के बीच उत्पादन और दाम के महत्वपूर्ण अंतर को स्पष्ट रूप से दिखाती है।

8. बैंगनी फूलगोभी से भविष्य की उम्मीदें

बैंगनी गोभी में कृषि और खाद्य उपभोग के भविष्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की क्षमता है। जैसे–जैसे पौष्टिक और दिखने में आकर्षक सब्जियों की उपभोक्ता मांग बढ़ती जा रही है, बैंगनी गोभी जैसी किस्में दुनिया भर के बाज़ारों में ज़्यादा प्रचलित होने की संभावना है। कृषि अनुसंधान और प्रजनन तकनीकों में प्रगति से और भी ज़्यादा मज़बूत और पोषण से भरपूर फूलगोभी की किस्मों का विकास हो सकता है, जिससे उनकी मांग और भी बढ़ सकती है। जैसे–जैसे ज़्यादा किसान इन किस्मों को अपनाएँगे, बैंगनी गोभी की उपलब्धता बढ़ने की उम्मीद है, जिससे यह ज़्यादा से ज़्यादा उपभोक्ताओं के लिए सुलभ हो जाएगी।

9. ग्रामीण किसानों और उपभोक्ताओं को सलाह

भारतीय बाजार के लिए विशेष रूप से विकसित की गई एक किस्म के रूप में यह पौष्टिक और दिखने में आकर्षक सब्जियों की बढ़ती मांग को पूरा करते हुए किसानों और उपभोक्ताओं दोनों के लिए एक मूल्यवान विकल्प प्रदान करती है। जिसमें अन्य प्रकार की फूलगोभी की तुलना में अधिक एंटीऑक्सीडेंट (एंथोसायनिन) और विटामिन C होते हैं। अपने अनूठे रंग, मजबूत आनुवंशिक गुणों और रसोई में बहुमुखी प्रतिभा के साथ, बैंगनी गोभी स्वास्थ्य के प्रति जागरूक उपभोक्ताओं के आहार में एक प्रमुख हिस्सा बनने के लिए तैयार है। कीट और रोग नियंत्रण के जैविक उपायों का प्रयोग कर बाजार में इसे एक उच्च मूल्य वाली सब्जी के रूप में बेचा जा सकता है। इसके अलावा सरकार की कृषि योजनाओं का लाभ उठाकर किसान अपनी आय में वृद्धि कर सकते हैं।

***

कृषक मंच - अगस्त 2025 संस्करण

लोकप्रिय लेखों के लिए आमंत्रण

वेबसाइट: krishakmanch.com

अंतिम तिथि: 28 अगस्त 2025

लेख के विषय:

- कृषि विज्ञान के प्रमुख क्षेत्र: एग्रोनॉमी, बागवानी, कीट विज्ञान, रोग विज्ञान, कृषि प्रसार, कृषि अर्थशास्त्र, जैव प्रौद्योगिकी आदि।
- नवीनतम कृषि तकनीकें।
- फसल प्रबंधन एवं रोग नियंत्रण।
- जैविक खेती एवं प्राकृतिक कृषि।
- जल संरक्षण व सिंचाई तकनीकें।
- सरकारी योजनाएं।

हमारे व्हाट्सएप समूह से जुड़ें: